जैन चालीसा संग्रह

विषय- सूची

(01) नवकार (णमोकार) मंत्र 3

(02) णमोकार माहात्म्य 6

(03) श्री आदिनाथ भगवान जी 11

(04) श्री अजितनाथ भगवान जी 14

(05) श्री सम्भवनाथ भगवान जी 16

(06) श्री अभिनन्दन नाथ भगवान जी 18

(07) श्री सुमतिनाथ भगवान जी 20

(08) श्री पद्मप्रभु भगवान जी 22

(09) श्री सुपार्श्वनाथ भगवान जी 24

(10) श्री चन्द्रप्रभु भगवान जी 26

(11) श्री पुष्पदन्त भगवान जी 28

(12) श्री शीतलनाथ भगवान जी 30

(13) श्री श्रेयान्सनाथ भगवान जी 32

(14) श्री वासुपूज्य भगवान जी 34

(15) श्री विमलनाथ भगवान जी 37

(16) श्री अनन्तनाथ भगवान जी 39

(17) श्री शान्तिनाथ भगवान जी 41

(18) श्री कुन्थनाथ भगवान जी 45

(19) श्री अरहनाथ भगवान जी 48

(20) श्री मल्लिनाथ भगवान जी 50

(21) श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान जी 52

(22) श्री नमिनाथ भगवान जी 54

(23) श्री नेमिनाथ भगवान जी 56

(24) श्री पार्श्वनाथ भगवान जी 58

(25) श्री महावीर भगवान जी 66

(26) बड़ागाँव पार्श्वनाथ जिन चालीसा 61

नवकार (णमोकार) मंत्र

(णमोकार) मंत्र चालीसा

सब सिंहो को नमन कर, सरस्वती को ध्याय |
चालीसा नवकार का, लिखूं त्रियोग लगाय ||

महामंत्र नवकार हमारा, जन जन को प्राणों से प्यारा ||१||
मंगलमय यह प्रथम कहा हैं, मंत्र अनधि निधन महा हैं ||२||

षटखंडागम में गुरुवर ने, मंगलाचरण लिखा प्राकृत में ||३||
यही से ही लिपिबद्ध हुआ हैं, भविजन ने डर धार लिया हैं ||४||

पांचो पद के पैतीस अक्षर, अट्ठावन मात्राए हैं सुखकर ||५||
मंत्र चौरासी लाख कहाए, इससे ही निर्मित बतलाए ||६||

अरिहंतो को नमन किया हैं, मिथ्यातम का वमन किया हैं ||७||
सब सिद्धो को वन्दन करके, झुक जाते भावों में भरकर ||८||

आचार्यों की पद भक्ति से, जीव उबरते नीज शक्ति से ||९||
उपाध्याय गुरुओं का वन्दन, मोह तिमिर का करता खंडन ||१०||

सर्व साधुओ को मन में लाना, अतिशयकारी पुन्य बढ़ाना ||११||
मोक्षमहल की नीव बनाता, अतः मूल मंत्र कहलाता ||१२||

स्वर्णाक्षर में जो लिखवाता, सम्पति से टूटे नहीं नाता ||१३||
णमोकार की अद्भुत महिमा, भक्त बने भगवन ये गरिमा ||१४||

जिसने इसको मन से ध्याया, मनचाहा फल उसने पाया ||१५||
अहंकार जब मन का मिटता, भव्य जीव तब इसको जपता ||१६||

मन से राग द्वेष मिट जाता, समता बाव ह्रदय में आता ||१७||
अंजन चोर ने इसको ध्याया, बने निरंजन निज पद पाया ||१८||

पार्श्वनाथ ने इसको सुनाया, नाग-नागिनी सुर पद पाया ||१९||
चाकदत्त ने अज की दीना, बकरा भी सुर बना नवीना ||२०||

सूली पर लटके कैदी को, दिया सेठ ने आत्मशुद्धि को ||२१||
हुई शांति पीड़ा हरने से, देव बना इसको पढ़ने से ||२२||

पदमरुची के बैल को दीना, उसने भी उत्तम पद लीना ||२३||
श्वान ने जीवन्धर से पाया, मरकर वह भी देव कहाया ||२४||

प्रातः प्रतिदिन जो पढ़ते हैं, अपने दुःख संकट हराते हैं ||२५||
जोन वकार की भक्ति करते, देव भी उनकी सेवा करते ||२६||

जिस जिसने इसे जपा हैं, वही स्वर्ण सैम खूब तप हैं||२७||
तप-तप कर कुंदन बन जाता, अंत में मोक्ष परम पद पाटा ||२८||

जो भी कंठहार कर लेता, उसको भव-भव में सुख देता ||२९||
जिसने इसको शीश पर धारा, उसने ही रिपु कर्म निवारा ||३०||

विश्वशान्ति का मूल मंत्र हैं, भेदज्ञान का महामंत्र हैं ||३१||
जिसने इसका पाठ कराया, वचन सिद्धि को उसने पाया ||३२||

खाते-पीते-सूते जपना, चलते-फिरते संकट हराना ||३३||
क्रोध अग्नि का बल घट जावे, मंत्र नीर शीतलता लावे ||३४||

चालीसा जो पढ़े पढावे, उसका बेडा पार हो जावे ||३५||
क्षुल्लकमणि शीतलसागर ने, प्रेरित किया लिखा 'अरुण' ने ||३६||

तीन योग से शीश नवाऊ, तीन रतन उत्तम पा जाऊं ||३७||
पर पदार्थ से प्रीत हटाऊं, शुद्धतम के ही गुण गाऊ ||३८||

हे प्रभु! बस यही वर चाहूँ, अंत समय नवकार ही ध्याऊ ||३९||
एक-एक सीधी चढ़ जाऊं, अनुक्रम से निजपद पा जाऊं ||४०||

पंच परम परमेष्ठी हैं, जग में विख्यात |
नमन करे जो भाव से, शिव सुख पा हर्षात ||

णमोकार माहात्म्य

अरिहंत वही होता है जो, चार घातिया करता क्षय।
अघाति कर्म का सर्वनाश कर, सिद्ध प्रभु होते अक्षय।१।

सर्व संघ को अनुशासन में, रखते हैं आचार्य प्रभु ।
मोक्षमार्ग का पाठ पढ़ाते , कहलाते उपाध्याय विभु।२।

अट्ठाईस मूल गुणों का नित, पालन करते हैं मुनिजन।
त्रियोग सहित भक्तिभाव से, नमन सभी करते बुधजन।३।

पंच पद पैंतीस अक्षर में, ब्रह्माण्ड समाया है।
'भारतीय' जैनाजैनों को, यही मंत्र नित भाया है।४।

त्रियोग सहित जो भक्तिभाव से, महामंत्र को करे नमन।
वज्र पाप—पर्वत का जैसे, क्षण में कर देता विघटन।५।

तीन लोक में महामंत्र यह, सर्वोपरि है सर्वोत्कृष्ट ।
अद्भुत है अनुपम है यह, वैभव है इसका प्रकृष्ट ।६।

पाताल मध्य व ऊर्ध्वलोक में, महामंत्र सुख का कारण।
उत्तम नरभव देवगति अरू, पंचम गति में सहकारण।७।

भाव सहित जो पढ़ता प्रतिदिन, दु:खनाशक सुखकारक है।
स्वर्गादिक अभ्युदय दाता, अंत मोक्ष सुखदायक है।८।

जीव जन्मते ही यदि वह इस महामंत्र को सुनता है।
सुगति प्राप्त करता है यदि वो , अंत समय इसे गुनता है।९।

विपदायें सब टल जाती है, भाव सहित करता चिंतन।
मार्ग सुलभ हो जाता है जब, मनसे मंत्र का करे मनन।१०।

व्रत धारी यदि महामंत्र को, निज कंठ में धरता है।
धन विद्या व ऋद्धिधरों से, श्रेष्ठ सदा ही रहता है।११।

महारत्न चिंतामणि से भी, कल्पद्रुम से है बढ़कर।
महामंत्र यह अनुमान है, नहीं लोक में कुछ समतर।१२।

गरूड़ मंत्र जैसे विकराल, सर्पों का विषनाशक है।
उससे श्रेष्ठ मंत्र है यह, सकल पाप का घातक है।१३।

नाते रिश्तेदार सभी ये, एक जन्म के हैं साथी।
स्वर्ग मोक्ष सुख देकर मंत्र, पंचम गाqत का है साथी।१४।

विधिपूर्वक भाव रहित जो, लाख बार मंत्र जपता है।
कहते हैं ज्ञानीजन उनको तीर्थंकर कर्म ही बंधता है।१५।

परम योगी ध्यानी जन नित ही महामंत्र यह ध्याते हैं।
परम तत्व है यही परमपद ऋषिगण यह समझाते हैं।१६।

शत साठ (१६०) विदेहवासी भी, महामंत्र यह जपते हैं।
कर्मों का वे क्षयकर क्षण में, भवसागर से तरते हैं।१७।

कर्मक्षेत्र वासी भी जब यह, णमोकार जप जपते हैं।
स्वर्गादिक वैभव को पाकर, अंत मोक्षसुख लभते हैं।१८।

जिनधर्म अनादि जीव अनादि, महामंत्र भी अनादि है।
अनादि हैं जपने वाले भी, मंत्र ध्यानी भी अनादि है।१९।

महामंत्र को ध्याकर ही वे, सिद्ध हुए होंगे आगे।
हृदय में जो नहीं धारता, मुक्त नहीं होगा आगे।२०।

सार है यह जिनशासन का द्वाद्वशांग का है आधार।
मनमें मंत्रको ध्याता उसका, कर क्या सकता है संसार।२१।

उठते बैठते जागते सोते, करो मंत्र का नित सुमिरन।
सब पापों का क्षय वो करता, होता नहीं कभी कुमरन।२२।

चौरासी लख मंत्रों का यह, बना हुआ अधिराजा है।
इसीलिए तो अनादिकाल से, हर हृदय में विराजा है।२३।

परमेष्ठी वाचक यह मंत्र, निज हृदय जो धरता है।
यश पूजा ऐश्वर्य को पाकर भव—सागर से तरता है।२४।

सब पापों के क्षय करने में, महामंत्र यह काफी है।
मोक्ष सदन तक लेजाने में, यही अकेला साथी है।२५।

देवी देवता जितने जग में, महामंत्र के किंकर हैं।
पूजा भक्ति करते प्रतिदिन, सेवा में नित तत्पर हैं।२६।

सातिशयी इस महामंत्र को, जो प्राणी नित ध्याता है।
विघ्न बाधा दूर हों उसकी, सुख—शांति वो पाता है।२७।

अनंत भवों के पापों को क्षय, करता है यह क्षणभर में।
आधि व्याधि जगमारी को यह, हरलेता है पलभर में।२८।

परमंत्रों परंतंत्रो का वश, नहीं चले इसके आगे ।
भूत पिशाच डाकिनी शकिनी सुनते मंत्र सभी भागे।२९।

ध्याता है जो मंत्र सदा ही, सभी कार्य होते हैं सफल ।
निराश कभी न होता जगमें, कभी नहीं होता असफल।३०।

मंगलों में मंगल है यह, उत्तमों में है उत्तम।
शरण गहो केवल इसकी ही, सहज मिलेगा मोक्षसदन।३१।

संकटों का है यह साथी, सुख का है अनुपम आधार।
भव—सागर में जो घबराता, कर देता है बेड़ापार।३२।

पग—पग पर इस महामंत्र को, मन ही मन जो ध्याता है।
कार्मों का वो क्षय है करता, अतं मोक्षसुख पाता है।३३।

प्रतिकूलता भी हो जाती , सदा ही तेरे मन अनुकूल।
भूल सुधर जाती है जबसे, शूल भी बन जाते हैं फूल।३४।

महामंत्र के नित जपने से, कर्म शक्ति होती कम।
पापपुण्य हो उदय में आता, मिट जाते हैं सारे गम।३५।

महामंत्र के चिंतक को कभी, अशुभकर्म का बंध नहीं।
निजमें वह तल्लीन ही रहता, परसे कुछ सबंध नहीं।३६।

कर्म निर्जरा होती उसके, प्रति समय है असंख्य गुणी।
श्रावकोचित क्रिया है करता, अंत समय होता है मुनी।३७।

पांचों परमेष्ठी प्रभु जी, निज आतम में ही स्थित है।
भय आशा स्नेह लोभ से, कभी न होता विचलित है।३८।

त्रिलोक व्यापी महामंत्र यह, त्रिकाल पूज्यहै सदा यही।
त्रिजग में है सर्वश्रेष्ठ यह, तीन भुवन में सार यही।३९।

भाव सहित इस महामंत्र का, अखण्ड पाठ जो करता है।
सहयोगी बन जाता है जग, जन्म मरण क्षय करता है।४०।

दोहा

महामंत्र की महिमा का, कैसे करूं गुणगान ।
निज हृदय धारण करो, पाओ मोक्ष निधान।।,

श्री आदिनाथ भगवान जी

श्री आदिनाथ चालीसा

(दोहा)

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करुं प्रणाम |
उपाध्याय आचार्य का ले सुखकारी नाम |
सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार |
आदिनाथ भगवान को, मन मन्दिर में धार ॥

(चोपाई)

जय जय आदिनाथ जिन के स्वामी, तीनकाल तिहूं जग में नामी ।
वेष दिगम्बर धार रहे हो, कर्मो को तुम मार रहे हो ॥
हो सर्वज्ञ बात सब जानो, सारी दुनिया को पहचानो ।
नगर अयोध्या जो कहलाये, राजा नभिराज बतलाये ॥
मरूदेवी माता के उदर से, चैतबदी नवमी को जन्मे ।
तुमने जग को ज्ञान सिखाया, कर्मभूमी का बीज उपाया ॥
कल्पवृक्ष जब लगे बिछरने, जनता आई दुखडा कहने ।
सब का संशय तभी भगाया, सूर्य चन्द्र का ज्ञान कराया ॥
खेती करना भी सिखलाया, न्याय दण्ड आदिक समझाया ।
तुमने राज किया नीती का सबक आपसे जग ने सीखा ॥

पुत्र आपका भरत बतलाया, चक्रवर्ती जग में कहलाया।
बाहुबली जो पुत्र तुम्हारे, भरत से पहले मोक्ष सिधारे॥
सुता आपकी दो बतलाई, ब्राह्मी और सुन्दरी कहलाई॥
उनको भी विध्या सिखलाई, अक्षर और गिनती बतलाई।
इक दिन राज सभा के अंदर, एक अप्सरा नाच रही थी॥
आयु बहुत बहुत अल्प थी, इस लिय आगे नही नाच सकी थी।
विलय हो गया उसका सत्वर, झट आया वैराग्य उमङ कर॥
बेटो को झट पास बुलाया, राज पाट सब में बटवाया।
छोड सभी झंझट संसारी, वन जाने की करी तैयारी॥
राजा हजारो साथ सिधाए, राजपाट तज वन को धाये।
लेकिन जब तुमने तप कीना, सबने अपना रस्ता लीना॥
वेष दिगम्बर तज कर सबने, छाल आदि के कपडे पहने।
भूख प्यास से जब घबराये, फल आदिक खा भूख मिटाये॥
तीन सौ त्रेसठ धर्म फैलाये, जो जब दुनिया में दिखलाये।
छः महिने तक ध्यान लगाये, फिर भोजन करने को धाये॥
भोजन विधि जाने न कोय, कैसे प्रभु का भोजन होय।
इसी तरह चलते चलते, छः महिने भोजन को बीते॥
नगर हस्तिनापुर में आये, राजा सोम श्रेयांस बताए।
याद तभी पिछला भव आया, तुमको फौरन ही पडगाया॥
रस गन्ने का तुमने पाया, दुनिया को उपदेश सुनाया।
तप कर केवल ज्ञान पाया, मोक्ष गए सब जग हर्षाया॥
अतिशय युक्त तुम्हारा मन्दिर, चांदखेडी भंवरे के अंदर।
उसको यह अतिशय बतलाया, कष्ट क्लेश का होय सफाया।
मानतुंग पर दया दिखाई, जंजिरे सब काट गिराई।
राजसभा में मान बढाया, जैन धर्म जग में फैलाया॥
मुझ पर भी महिमा दिखलाओ, कष्ट भक्त का दूर भगाओ॥

(सोरठा)

पाठ करे चालीस दिन, नित चालीस ही बार,
चांदखोडी में आयके, खेवे धूप अपार।
जन्म दरिद्री होय जो, होय कुबेर समान,
नाम वंश जग में चले, जिसके नही संतान ॥

श्री अजितनाथ भगवानजी

श्री अजितनाथ चालीसा

श्री आदिनाथ को शिश नवा कर, माता सरस्वती को ध्याय।
शुरू करूँ श्री अजितनाथ का, चालीसास्व – सुखदाय ॥
जय श्री अजितनाथ जिनराज। पावन चिह्न धरे गजराज ॥
नगर अयोध्या करते राज। जितराज नामक महाराज ॥
विजयसेना उनकी महारानी। देखे सोलह स्वप्न ललामी ॥
दिव्य विमान विजय से चयकर। जननी उदर बसे प्रभु आकर ॥
शुक्ला दशमी माघ मास की। जन्म जयन्ती अजित नाथ की ॥
इन्द्र प्रभु को शीशधार कर। गए सुमेरू हर्षित हो कर ॥
नीर शीर सागर से लाकर। न्हवन करें भक्ति में भरकर ॥
वस्त्राभूषण दिव्य पहनाए। वापस लोट अयोध्या आए ॥
अजित नाथ की शोभा न्यारी। वर्ण स्वर्ण सम कान्तिधारी ॥
बीता बचपन जब हितकारी। हुआ ब्याह तब मंगलकारी ॥
कर्मबन्ध नही हो भोगो में। अन्तदृष्टि थी योगो में ॥
चंचल चपला देखी नभ में। हुआ वैराग्य निरन्तर मन में ॥
राजपाट निज सुत को देकर। हुए दिगम्बर दीक्षा लेकर ॥
छः दिन बाद हुआ आहार। करे श्रेष्ठि ब्रह्मा सत्कार ॥
किये पंच अचरज देवो ने। पुण्योपार्जन किया सभी ने ॥
बारह वर्ष तपस्या कीनी। दिव्यज्ञान की सिद्धि नवीनी ॥
धनपति ने इन्द्राज्ञा पाकर। रच दिया समोशरण हर्षाकर ॥
सभा विशाल लगी जिनवर की। दिव्यध्वनि खिरती प्रभुवर की ॥

वाद विवाद मिटाने हेतु । अनेकांत का बाँधा सेतु ।।
है सापेक्ष यहा सब तत्व । अन्योन्याश्रित है उन सत्व ।।
सब जिवो में है जो आतम । वे भी हो सक्ते शुद्धात्म ।।
ध्यान अग्नि का ताप मिले जब । केवल ज्ञान की की ज्योति जले तब ।।
मोक्ष मार्ग तो बहुत सरल है । लेकिन राहीहुए विरल है ।।
हीरा तो सब ले नही पावे । सब्जी भाजी भीड़ धरावे ।।
दिव्यध्वनि सुन कर जिनवर की । खिली कली जन जन के मन की ।।
प्राप्ति कर सम्यग्दर्शन की । बगिया महकी भव्य जनो की ।।
हिंसक पशु भी समता धारे । जन्म जन्म का का वैर निवारे ।।
पूर्ण प्रभावना हुई धर्म की । भावना शुद्ध हुई भविजन की ।।
दुर दुर तक हुआ विहार । सदाचार का हुआ प्रचार ।।
एक माह की उम्र रही जब । गए शिखर सम्मेद प्रभु तब ।।
अखण्ड मौन मुद्रा की धारण । कर्म अघाती हेतु निवारण ।।
शुक्ल ध्यान का हुआ प्रताप । लोक शिखर पर पहुँचे आप ।।
सिद्धवर कुट की भारी महिमा । गाते सब प्रभु के गुण – गरिमा ।।
विजित किए श्री अजित ने । अष्ट कर्म बलवान ।।
निहित आत्मगुण अमित है , अरूणा सुख की खान ।।

श्री सम्भवनाथ भगवान जी

श्री सम्भवनाथ चालीसा

श्री जिनदेव को करके वंदन, जिनवानी को मन में ध्याय ।
काम असम्भव कर दे सम्भव, समदर्शी सम्भव जिनराय ॥
जगतपूज्य श्री सम्भव स्वामी । तीसरे तीर्थंकर है नामी ॥
धर्म तीर्थ प्रगटाने वाले । भव दुख दुर भगाने वाले ॥
श्रावस्ती नगरी अती सोहे । देवो के भी मन को मोहे ॥
मात सुषेणा पिता दृडराज । धन्य हुए जन्मे जिनराज ॥
फाल्गुन शुक्ला अष्टमी आए । गर्भ कल्याणक देव मनाये ॥
पूनम कार्तिक शुक्ला आई । हुई पूज्य प्रगटे जिनराई ॥
तीन लोक में खुशियाँ छाई । शची पर्भु को लेने आई ॥
मेरू पर अभिषेक कराया । सम्भवपर्भु शुभ नाम धराया ॥
बीता बचबन यौवन आया । पिता ने राज्यभिषेक कराया ॥
मिली रानियाँ सब अनुरूप । सुख भोगे चवालिस लक्ष पूर्व ॥
एक दिन महल की छत के ऊपर । देख रहे वन-सुषमा मनहर ॥
देखा मेघ – महल हिमखण्ड । हुआ नष्ट चली वासु प्रचण्ड ॥
तभी हुआ वैराग्य एकदम । गृहबन्धन लगा नागपाश सम ॥
करते वस्तु-स्वरूप चिन्तवन । देव लौकान्तिक करें समर्थन ॥
निज सुत को देकर के राज । वन को गमन करें जिनराज ॥
हुए स्वार सिद्धार्थ पालकी । गए राह सहेतुक वन की ॥
मंगसिर शुक्ल पूर्णिमा प्यारी । सहस भूप संग दीक्षा धारी ॥

तजा परिग्रह केश लौंच कर । ध्यान धरा पूरब को मुख कर ॥
धारण कर उस दिन उपवास । वन में ही फिर किया निवास ॥
आत्मशुद्धि का प्रबल प्रणाम । तत्क्षण हुआ मनः पर्याय ज्ञान ॥
प्रथमाहार हुआ मुनिवर का । धन्य हुआ जीवन सुरेन्द्र का ॥
पंचाश्चर्यो से देवो के । हुए प्रजाजन सुखी नगर के ॥
चौदह वर्ष की आत्म सिद्धि । स्वयं ही उपजी केवल ऋद्धि ॥
कृष्ण चतुर्थी कार्तिक सार । समोशरण रचना हितकार ॥
खिरती सुखकारी जिनवाणी । निज भाषा में समझे प्राणी ॥
विषयभोग हैं भोगों से । काया घिरती है रोगो से ॥
जिनलिंग से निज को पहचानो । अपना शुद्धातम सरधानो ॥
दर्शन-ज्ञान-चरित्र बतावे । मोक्ष मार्ग एकत्व दिखाये ॥
जीवों का सन्मार्ग बताया । भव्यो का उद्धार कराया ॥
गणधर एक सौ पाँच प्रभु के । मुनिवर पन्द्रह सहस संघ के ॥
देवी – देव – मनुज बहुतेरे । सभा में थे तिर्यंच घनेरे ॥
एक महीना उम्र रही जब । पहुँच गए सम्मेद शिखर तब ॥
अचल हुए खडगासन में प्रभु । कर्म नाश कर हुए स्वयम्भु ॥
चैत सुदी षष्ठी था न्यारी । धवल कूट की महिमा भारी ॥
साठ लाख पूर्व का जीवन । पग में अश्व का था शुभ लक्षण ॥

चालीसा श्री सम्भवनाथ, पाठ करो श्रद्धा के साथ ।
मनवांछित सब पूरण होवे, जनम – मरन दुख खोवे ॥

श्री अभिनन्दन नाथ भगवान जी

श्री अभिनन्दन नाथ चालीसा

ऋषभ – अजित – सम्भव अभिनन्दन, दया करे सब पर दुखभंजन
जनम – मरन के टुटे बन्धन, मन मन्दिर तिष्ठें अभिनन्दन ॥
अयोध्या नगरी अती सुंदर, करते राज्य भूपति संवर ॥
सिद्धार्था उनकी महारानी, सूंदरता में थी लासानी ॥
रानी ने देखे शुभ सपने, बरसे रतन महल के अंगने ॥
मुख में देखा हस्ति समाता, कहलाई तीर्थंकर माता ॥
जननी उदर प्रभु अवतारे, स्वर्गो से आए सुर सारे ॥
मात पिता की पूजा करते, गर्भ कल्याणक उत्सव करते ॥
द्धादशी माघ शुक्ला की आई, जन्मे अभिनन्दन जिनराई ॥
देवो के भी आसन काँपे, शिशु को ले कर गए मेरू पे ॥
न्हवन किया शत – आठ कलश से, अभिनन्दन कहा प्रेम भाव से ॥
सूर्य समान प्रभु तेजस्वी, हुए जगत में महायशस्वी ॥
बोले हित – मित वचन सुबोध, वाणी में नही कही विरोध ॥
यौवन से जब हुए विभूषित, राज्यश्री को किया सुशोभित ॥
साढे तीन सौ धनुष प्रमान, उन्नत प्रभु – तन शोभावान ॥
परणाई कन्याएँ अनेक, लेकिन छोडा नही विवेक ॥
नित प्रती नूतन भोग भोगते, जल में भिन्न कमल सम रहते ॥

इक दिन देखे मेघ अम्बर में, मेघ महल बनते पल भर में ॥
हुए विलीन पवन चलने से, उदासीन हो गए जगत से ॥
राजपाट निज सुत को सौंपा, मन में समता – वृक्ष को रोपा ॥
गए उग्र नामक उध्यान, दीक्षीत हुए वहाँ गुणखान ॥
शुक्ला द्धादशी थी माघ मास, दो दिन का धारा उपवास ॥
तिसरे दिन फिर किया विहार, इन्द्रदत नृपने दिया आहार ॥
वर्ष अठारह किया घोर तप, सहे शीत – वर्षा और आतप ॥
एक दिन असन वृक्ष के निचे, ध्यान वृष्टि से आतम सींचे ॥
उदय हुआ केवल दिनकर का, लोका लोक ज्ञान में झसका ॥
हुई तब समोशरण की रचना, खिरी प्रभु की दिव्य देशना ॥
जीवाजीव और धर्माधर्म, आकाश – काल षटद्रव्य मर्म ॥
जीव द्रव्य ही सारभूत है, स्वयंसिद्ध ही परमपूत है ॥
रूप तीन लोक – समझाया, ऊध्र्व – मध्य – अधोलोक बताया ॥
नीचे नरक बताए सात, भुगते पापी अपने पाप ॥
ऊपर सओसह सवर्ग सुजान, चतुनिर्काय देव विमान ॥
मध्य लोक में द्धीप असँख्य, ढाई द्धीप में जायें भव्य ॥
भटको को सन्मार्ग दिखाया, भव्यो को भव – पार लगाया ॥
पहुँचे गढ़ सम्मेद अन्त में, प्रितमा योग धरा एकान्त में ॥
शुक्लध्यान में लीन हुए तब, कर्म प्रकृती क्षीण हुई सब ॥
वैसाख शुक्ला षष्ठी पुण्यवान, प्रातः प्रभु का हुआ निर्वाण ॥
मोक्ष कल्याणक करें सुर आकर, आनन्दकूट पूजें हर्षाकर ॥
चालीसा श्रीजिन अभिनन्दन, दूर करे सबके भवक्रन्दन ॥
स्वामी तुम हो पापनिकन्दन, हम सब करते शत-शत वन्दन ॥

श्री सुमतिनाथ भगवान जी

श्री सुमतिनाथ चालीसा

श्री सुमतिनाथ का करूणा निर्झर, भव्य जनो तक पहूँचे झर – झर ।।
नयनो में प्रभु की छवी भर कर, नित चालीसा पढे सब घर – घर ।।
जय श्री सुमतिनाथ भगवान, सब को दो सदबुद्धि – दान ।।
अयोध्या नगरी कल्याणी, मेघरथ राजा मंगला रानी ।।
दोनो के अति पुण्य पर्रजारे, जो तीर्थंकर सुत अवतारे ।।
शुक्ला चैत्र एकादशी आई, प्रभु जन्म की बेला आई ।।
तीन लोक में आनंद छाया, नरकियों ने दुःख भुलाया ।।
मेरू पर प्रभु को ले जा कर, देव न्हवन करते हर्षाकार ।।
तप्त स्वर्ण सम सोहे प्रभु तन, प्रगटा अंग – प्रतयंग में योवन ।।
ब्याही सुन्दर वधुएँ योग, नाना सुखों का करते भोग ।।
राज्य किया प्रभु ने सुव्यवस्थित, नही रहा कोई शत्रु उपस्थित ।।
हुआ एक दिन वैराग्य जब, नीरस लगने लगे भोग सब ।।
जिनवर करते आत्म चिन्तन, लौकान्तिक करते अनुमोदन ।।
गए सहेतुक नावक वन में, दीक्षा ली मध्याह्म समय में ।।
बैसाख शुक्ला नवमी का शुभ दिन, प्रभु ने किया उपवास तीन दिन ।।
हुआ सौमनस नगर विहार, धुम्नधुति ने दिया आहार ।।
बीस वर्ष तक किया तप घोर, आलोकित हुए लोका लोक ।।

एकादशी चैत्र की शुक्ला, धन्य हुई केवल – रवि निकाला ॥
समोशरण में प्रभु विराजे, द्वादश कोठे सुन्दर साजें ॥
दिव्यध्वनि जब खिरी धरा पर, अनहद नाद हुआ नभ उपर ॥
किया व्याख्यान सप्त तत्वो का, दिया द्रष्टान्त देह – नौका का ॥
जीव – अजिव – आश्रव बन्ध, संवर से निर्जरा निर्बन्ध ॥
बन्ध रहित होते है सिद्ध, है यह बात जगत प्रसिद्ध ॥
नौका सम जानो निज देह, नाविक जिसमें आत्म विदह ॥
नौका तिरती ज्यो उदधि में, चेतन फिरता भवोदधि में ॥
हो जाता यदि छिद्र नाव में, पानी आ जाता प्रवाह में ॥
ऐसे ही आश्रव पुद्गल में, तीन योग से हो प्रतीपल में ॥
भरती है नौका ज्यो जल से, बँधती आत्मा पुण्य पाप से ॥
छिद्र बन्द करना है संवर, छोड़ शुभाशुभ – शुद्धभाव धर ॥
जैसे जल को बाहर निकाले, संयम से निर्जरा को पाले ॥
नौका सुखे ज्यों गर्मी से, जीव मुक्त हो ध्यानाग्नि से ॥
ऐसा जान कर करो प्रयास, शाश्वत सुख पाओ सायास ॥
जहाँ जीवों का पुन्य प्रबल था, होता वही विहार स्वयं था ॥
उम्र रही जब एक ही मास, गिरि सम्मेद पे किया निवास ॥
शुक्ल ध्यान से किया कर्मक्षय, सन्धया समय पाया पद अक्षय ॥
चैत्र सुदी एकादशी सुन्दर, पहुँच गए प्रभु मुक्ति मन्दिर ॥
चिन्ह प्रभु का चकवा जान, अविचल कूट पूजे शुभथान ॥
इस असार संसार में , सार नही है शेष ॥
हम सब चालीसा पढे, रहे विषाद न लेश ॥

श्री पद्मप्रभु भगवान जी

चालीसा श्रीपद्मप्रभु

शीश नवा अर्हंत को सिद्धन करुं प्रणाम |
उपाध्याय आचार्य का ले सुखकारी नाम ||
सर्व साधु और सरस्वती जिन मन्दिर सुखकार |
पद्मपुरी के पद्म को मन मन्दिर में धार ||
जय श्रीपद्मप्रभु गुणधारी, भवि जन को तुम हो हितकारी |
देवों के तुम देव कहाओ, पाप भक्त के दूर हटाओ ||
तुम जग में सर्वज्ञ कहाओ, छट्टे तीर्थंकर कहलाओ |
तीन काल तिहुं जग को जानो, सब बातें क्षण में पहचानो ||
वेष दिगम्बर धारणहारे, तुम से कर्म शत्रु भी हारे |
मूर्ति तुम्हारी कितनी सुन्दर, दृष्टि सुखद जमती नासा पर ||
क्रोध मान मद लोभ भगाया, राग द्वेष का लेश न पाया |
वीतराग तुम कहलाते हो, ; सब जग के मन को भाते हो ||
कौशाम्बी नगरी कहलाए, राजा धारणजी बतलाए |
सुन्दरि नाम सुसीमा उनके, जिनके उर से स्वामी जन्मे ||
कितनी लम्बी उमर कहाई, तीस लाख पूरब बतलाई |
इक दिन हाथी बंधा निरख कर, झट आया वैराग उमड़कर ||
कार्तिक वदी त्रयोदशी भारी, तुमने मुनिपद दीक्षा धारी |

सारे राज पाट को तज के, तभी मनोहर वन में पहुंचे ||
तप कर केवल ज्ञान उपाया, चैत सुदी पूनम कहलाया |
एक सौ दस गणधर बतलाए, मुख्य व्रज चामर कहलाए ||
लाखों मुनि आर्यिका लाखों, श्रावक और श्राविका लाखों |
संख्याते तिर्यच बताये, देवी देव गिनत नहीं पाये ||
फिर सम्मेदशिखर पर जाकर, शिवरमणी को ली परणा कर|
पंचम काल महा दुखदाई, जब तुमने महिमा दिखलाई ||
जयपुर राज ग्राम बाड़ा है, स्टेशन शिवदासपुरा है |
मूला नाम जाट का लड़का, घर की नींव खोदने लागा ||
खोदत-खोदत मूर्ति दिखाई, उसने जनता को बतलाई |
चिन्ह कमल लख लोग लुगाई, पद्म प्रभु की मूर्ति बताई ||
मन में अति हर्षित होते हैं, अपने दिल का मल धोते हैं |
तुमने यह अतिशय दिखलाया, भूत प्रेत को दूर भगाया ||
भूत प्रेत दुःख देते जिसको, चरणों में लेते हो उसको |
जब गंधोदक छींटे मारे, भूत प्रेत तब आप बकारे ||
जपने से जब नाम तुम्हारा, भूत प्रेत वो करे किनारा |
ऐसी महिमा बतलाते हैं, अन्धे भी आंखे पाते है ||
प्रतिमा श्वेत-वर्ण कहलाए, देखत ; ही हिरदय को भाए |
ध्यान तुम्हारा जो धरता है, इस भव से वह नर तरता है ||
अन्धा देखे, गूंगा गावे, लंगड़ा पर्वत पर चढ़ जावे |
बहरा सुन-सुन कर खुश होवे, जिस पर कृपा तुम्हारी होवे||
मैं हूं स्वामी दास तुम्हारा, मेरी नैया कर दो पारा |
चालीसे को 'चन्द्र' बनावे, पद्म प्रभु को शीश नवावे ||
सोरठाः- नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन |
खेय सुगन्ध अपार, पद्मपुरी में आय के ||
होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो |
जिसके नहिं सन्तान, नाम वंश जग में चले ||

श्री सुपार्श्वनाथ भगवान जी

श्री सुपार्श्वनाथ चालीसा

लोक शिखर के वासी है प्रभु, तीर्थंकर सुपार्श्व जिनराज ॥
नयन द्वार को खोल खडे हैं, आओ विराजो हे जगनाथ ॥
सुन्दर नगर वारानसी स्थित, राज्य करे राजा सुप्रतिष्ठित ॥
पृथ्वीसेना उनकी रानी, देखे स्वप्न सोलह अभिरामी ॥
तीर्थंकर सुत गर्भमें आए, सुरगण आकर मोद मनायें ॥
शुक्ला ज्येष्ठ द्वादशी शुभ दिन, जन्मे अहमिन्द्र योग में श्रीजिन ॥
जन्मोत्सव की खूशी असीमित, पूरी वाराणसी हुई सुशोभित ॥
बढे सुपार्श्वजिन चन्द्र समान, मुख पर बसे मन्द मुस्कान ॥
समय प्रवाह रहा गतीशील, कन्याएँ परणाई सुशील ॥
लोक प्रिय शासन कहलाता, पर दुष्टो का दिल दहलाता ॥
नित प्रति सुन्दर भोग भोगते, फिर भी कर्मबन्द नही होते ॥
तन्मय नही होते भोगो में, दृष्टि रहे अन्तर – योगो में ॥
एक दिन हुआ प्रबल वैराग्य, राजपाट छोड़ा मोह त्याग ॥
दृढ़ निश्चय किया तप करने का, करें देव अनुमोदन प्रभु का ॥
राजपाट निज सुत को देकर, गए सहेतुक वन में जिनवर ॥

ध्यान में लीन हुए तपधारी, तपकल्याणक करे सुर भारी ॥
हुए एकाग्र श्री भगवान, तभी हुआ मनः पर्यय ज्ञान ॥
शुद्धाहार लिया जिनवर ने, सोमखेट भूपति के ग्रह में ॥
वन में जा कर हुए ध्यानस्त, नौ वर्षो तक रहे छद्मस्थ ॥
दो दिन का उपवास धार कर, तरू शिरीष तल बैठे जा कर ॥
स्थिर हुए पर रहे सक्रिय, कर्मशत्रु चतुः किये निष्क्रय ॥
क्षपक श्रेणी में हुए आरूढ़, ज्ञान केवली पाया गूढ़ ॥
सुरपति ज्ञानोत्सव कीना, धनपति ने समो शरण रचीना ॥
विराजे अधर सुपार्श्वस्वामी, दिव्यध्वनि खिरती अभिरामी ॥
यदि चाहो अक्ष्य सुखपाना, कर्माश्रिव तज संवर करना ॥
अविपाक निर्जरा को करके, शिवसुख पाओ उद्यम करके ॥
चतुः दर्शन – ज्ञान अष्ट बतायें, तेरह विधि चारित्र सुनायें ॥
सब देशो में हुआ विहार, भव्यो को किया भव से पार ॥
एक महिना उम्र रही जब, शैल सम्मेद पे, किया उग्र तप ॥
फाल्गुन शुक्ल सप्तमी आई, मुक्ती महल पहुँचे जिनराई ॥
निर्वाणोत्सव को सुर आये। कूट प्रभास की महिमा गाये ॥
स्वास्तिक चिन्ह सहित जिनराज, पार करें भव सिन्धु – जहाज ॥
जो भी प्रभु का ध्यान लगाते, उनके सब संकट कट जाते ॥
चालीसा सुपार्श्व स्वामी का, मान हरे क्रोधी कामी का ॥
जिन मंदिर में जा कर पढ़ना, प्रभु का मन से नाम सुमरना ॥
हमको है दृढ़ विश्वास, पूरण होवे सबकी आस ॥

श्री चन्द्रप्रभु भगवान जी

चालीसा श्री चन्द्रप्रभु

वीतराग सर्वज्ञ जिन, जिन वाणी को ध्याय ॥
पढने का साहस करूं, चालीसा सिर नाय ॥
देहरे के श्री चन्द को, पूजों मन वच काय ॥
ऋद्धि सिद्धि मंगल करे, विघन दूर हो जाय ॥
जय श्री चंद्र दया के सागर, देहरे वाले ज्ञान उजागर ॥
नासा पर है द्रष्टि तुम्हारी, मोहनी मूरति कितनी प्यारी ॥
देवो के तुम देव कहावो, कष्ट भक्त के दूर हटावो ॥
समन्तभद्र मुनिवर ने धयाया, पिंडी फटी दर्श तुम पाया ॥
तुम जग के सर्वज्ञ कहावो, अष्टम तीर्थंकर कहलावो ॥
महासेन के राजदुलारे, मात सुलक्षना के हो प्यारे ॥
चन्द्रपुरी नगरी अति नामी, जन्म लिया चन्द्र प्रभु स्वामी ॥
पौष वदी ग्यारस को जन्मे, नर नारी हर्षे तन मन में ॥
काम क्रोध तृष्णा दुखकारी, त्याग सुखद मुनि दीक्षा धारी ॥
फाल्गुन वदी सप्तमी भाई, केवल ज्ञान हुआ सुखदाई ॥
फिर सम्मेद शिखर पर जाके, मोक्ष गये प्रभु आप वहाँ से ॥
लोभ मोह और छोडी माया, तुमने मान कषाय नसाया ॥
रागी नही , नही तू द्वेषी, वीतराग तू हित उपदेशी ॥

पंचम काल महा दुखदाई, धर्म कर्म भूले सब भाई ॥
अलवर प्रान्त में नगर तिजारा, होय जहां पर दर्शन प्यारा ॥
उत्तर दिशा में देहरा माहीं, वहा आकर प्रभुता प्रगटाई ॥
सावन सुदि दशमी शुभ नामी, आन पधारे त्रिभुवन स्वामी ॥
चिन्ह चन्द्र का लख नारी, चन्द्रप्रभु की मूरत मानी ॥
मूर्ति आपकी अति उजियाली, लगता हीरा भी है जाली ॥
अतिशय चन्द्र प्रबु का भारी, सुन कर आते यात्री भारी ॥
फाल्गुन सुदी सप्तमी प्यारी, जुड़ता है मेला यहां भारी ॥
कहलाने को तो शशि धर हो, तेज पुंज रवि से बढ़कर हो ॥
नाम तुम्हारा जग में सांचा, ध्यावत भागत भूत पिशाचा ॥
राक्षस भूत प्रेत सब भागें, तुम सुमरत भय कभी न लागे ॥
कीर्ती तुम्हारी है अति भारी, गुण गाते नित नर और नारी ॥
जिस पर होती कृपा तुम्हारी, संकट झट कटता है भारी ॥
जो भी जैसी आश लगाता, पूरी उसे तुरन्त कर पाता ॥
दुखिया दर पर जो आते है, संकट सब खो कर जाते है ॥
खुला सभी को प्रभु द्वार है, चमत्कार को नमस्कार है ॥
अन्धा भी यदि ध्यान लगावे, उसके नेत्र शीघ्र खुल जावे ॥
बहरा भी सुनने लग जावे, पगले का पागलपन जावे ॥
अखंड ज्योति का घृत जो लगावे,संकट उसका सब कट जावे ॥
चरणों की रज अति सुखकारी, दुख दरिद्र सब नाशनहारी ॥
चालीसा जो मन से धयावे, पुत्र पौत्र सब सम्पति पावे ॥
पार करो दुखियो की नैया, स्वामी तुम बिन नही खिवैया ॥
प्रभु मैं तुम से कुछ नही चाहूँ, दर्श तिहारा निश दिन पाऊँ ॥
करूँ वंदना आपकी, श्री चन्द्र प्रभु जिनराज ।
जंगल में मंगल कियो, रखो हम सबकी लाज ॥

श्री पुष्पदन्त भगवान जी

श्री पुष्पदन्त चालीसा

दुख से तप्त मरूस्थल भव में, सघन वृक्ष सम छायाकार ।।
पुष्पदन्त पद – छत्र – छाँव में हम आश्रय पावे सुखकार ।।
जम्बूद्विप के भारत क्षेत्र में, काकन्दी नामक नगरी में ।।
राज्य करें सुग्रीव बलधारी, जयरामा रानी थी प्यारी ।।
नवमी फाल्गुन कृष्ण बल्वानी, षोडश स्वप्न देखती रानी ।।
सुत तीर्थंकर हर्भ में आएं, गर्भ कल्याणक देव मनायें ।।
प्रतिपदा मंगसिर उजयारी, जन्मे पुष्पदन्त हितकारी ।।
जन्मोत्सव की शोभा नंयारी, स्वर्गपूरी सम नगरी प्यारी ।।
आयु थी दो लक्ष पूर्व की, ऊँचाई शत एक धनुष की ।।
थामी जब राज्य बागडोर, क्षेत्र वृद्धि हुई चहुँ ओर ।।
इच्छाएँ उनकी सीमीत, मित्र पर्भु के हुए असीमित ।।
एक दिन उल्कापात देखकर, दृष्टिपाल किया जीवन पर ।।
स्ि‍थर कोई पदार्थ न जग में, मिले न सुख किंचित् भवमग में ।।
ब्रह्मलोक से सुरगन आए, जिनवर का वैराग्य बढ़ायें।।
सुमति पुत्र को देकर राज, शिविका में प्रभु गए विराज ।।
पुष्पक वन में गए हितकार, दीक्षा ली संगभूप हज़ार ।।
गए शैलपुर दो दिन बाद, हुआ आहार वहाँ निराबाद ।।

पात्रदान से हर्षित होमकर, पंचाश्चर्य करे सुर आकर ॥
प्रभुवर लोट गए उपवन को, तत्पर हुए कर्म- छेदन को ॥
लगी समाधि नाग वृक्ष तल, केवलज्ञान उपाया निर्मल ॥
इन्द्राज्ञा से समोश्रण की, धनपति ने आकर रचना की ॥
दिव्य देशना होती प्रभु की, ज्ञान पिपासा मिटी जगत की ॥
अनुप्रेक्षा द्वादश समझाई, धर्म स्वरूप विचारो भाई ॥
शुक्ल ध्यान की महिमा गाई, शुक्ल ध्यान से हों शिवराई ॥
चारो भेद सहित धारो मन, मोक्षमहल में पहुँचो तत्क्षण ॥
मोक्ष मार्ग दर्शाया प्रभु ने, हर्षित हुए सकल जन मन में ॥
इन्द्र करे प्रार्थना जोड़ कर, सुखद विहार हुआ श्री जिनवर ॥
गए अन्त में शिखर सम्मेद, ध्यान में लीन हुए निरखेद ॥
शुक्ल ध्यान से किया कर्मक्षय, सन्ध्या समय पाया पद आक्षय ॥
अश्विन अष्टमी शुकल महान, मोक्ष कल्याणक करें सुर आन ॥
सुप्रभ कूट की करते पूजा, सुविधि नाथ नाम है दूजा ॥
मगरमच्छ है लक्षण प्रभु का, मंगलमय जीवन था उनका ॥
शिखर सम्मेद में भारी अतिशय, प्रभु प्रतिमा है चमत्कारमय ॥
कलियुग में भी आते देव, प्रतिदिन नृत्य करें स्वयमेव ॥
घुंघरू की झंकार गूंजती, सब के मन को मोहित करती ॥
ध्वनि सुनी हमने कानो से, पूजा की बहु उपमानो से ॥
हमको है ये दृड श्रद्धान, भक्ति से पायें शिवथान ॥
भक्ति में शक्ति है न्यारी, राह दिखायें करूणाधारी ॥
पुष्पदन्त गुणगान से, निश्चित हो कल्याण ॥
हम सब अनुक्रम से मिले, अन्तिम पद निर्वाण ॥

श्री शीतलनाथ भगवान जी

श्री शीतलनाथ चालीसा

शीतल हैं शीतल वचन, चन्दन से अधिकाय।
कल्पवृक्ष सम प्रभु चरण, है सबको सुखदाय।
जय श्री शीतलनाथ गुणाकर, महिमा मण्डित.करुणासागर।
भद्धिलपुर के दृढ़रथ राय, भूप प्रजावत्सल कहलाए।
रमणी रत्न सुनन्दा रानी, गर्भ में आए जिनवर ज्ञानी।
द्वादशी माघ बदी को जन्मे, हर्ष लहर उमडी त्रिभुवन में।
उत्सव करते देव अनेक, मेरु पर करते अभिषेक।
नाम दिया शिशु जिन को शीतल, भीष्म ज्वाल अध होती शीतल।
एक लक्ष पूर्वायु प्रभु की, नब्बे धनुष अवगाहना वपु की।
वर्ण स्वर्ण सम उज्जवलपीत, दया धर्म था उनका मीत।
निरासक्त थे विषय भोग में, रत रहते थे आत्मयोग मेँ।
एक दिन गए भ्रमण को वन में, करे प्रकृति दर्शन उपवन भे।
लगे ओसकण मोती जैसे, लुप्त हुए सब सूर्योदय से।
देख ह्रदय में हुआ वैराग्य, आतम हित में छोड़ा राग।
तप करने का निश्चय करते, ब्रह्मर्षि अनुमोदन करते।
विराजे शुक्रप्रभा शिविका पर, गए सहेतुक वन में जिनवर।
संध्या समय ली दीक्षा अक्षुण्ण, चार ज्ञान धारी हुए तत्क्षण।

दो दिन का व्रत करके इष्ट, प्रथमाहार हुआ नगर अरिष्ट।
दिया आहार पुनर्वसु नृप ने, पंचाश्चर्य किए देवों ने।
किया तीन वर्ष तप घोर, शीतलता फैली चहुँ ओर।
कृष्ण चतुर्दशी पौषविरव्याता, कैवलज्ञानी हुए जगत्राता।
रचना हुई तब समोशरण की, दिव्य देशना खिरी प्रभु की।
"आतम हित का मार्ग बताया, शंकित चित समाधान कराया।
तीन प्रकार आत्मा जानो, बहिरातन-अन्तरातम मानो।
निश्चय करके निज आतम का, चिन्तन कर लो परमातम का।
मोह महामद से मोहित जो, परमातम को नहीं मानें वो।
वे ही भव... भव में भटकाते, वे ही बहिरातम कहलाते।
पर पदार्थ से ममता तज के, परमात्म में श्रद्धा करके।
जो नित आतम ध्यान लगाते, वे अन्तर- आतम कहलाते।
गुण अनन्त के धारी है जो, कर्मों के परिहारी है जो।
लोक शिखर के वासी है वे, परमात्म अविनाशी हैं वे।
जिनवाणी पर श्रद्धा धरके, पार उतरते भविजन भव से।
श्री जिनके इक्यासी गणधर, एक लक्ष थे पूज्य मुनिवर।
अन्त समय गए सम्मेदाचंल, योग धार कर हो गए निश्चल।
अश्विन शुक्ल अष्टमी आई, मुक्ति महल पहुंचे जिनराई।
लक्षण प्रभु का 'कल्पवृक्ष' था, त्याग सकल सुख वरा मोक्ष था।
शीतल चरण-शरण में आओ, कूट विद्युतवर शीश झुकाओ।
शीतल जिन शीतल करें, सबके भव-आताप।
हम सब के मन में बसे, हरे' सकलं सन्ताप।

श्री श्रेयान्सनाथ भगवान जी

श्री श्रेयान्सनाथ चालीसा

निज मन में करके स्थापित, पंच परम परमेष्ठि को।
लिखूँ श्रेयान्सनाथ – चालीसा, मन में बहुत ही हर्षित हो ॥
जय श्रेयान्सनाथ श्रुतज्ञायक हो, जय उत्तम आश्रय दायक हो ॥
माँ वेणु पिता विष्णु प्यारे, तुम सिहंपुरी में अवतारे ॥
जय ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी प्यारी, शुभ रत्नवृष्टि होती भारी ॥
जय गर्भकत्याणोत्सव अपार, सब देव करें नाना प्रकार ॥
जय जन्म जयन्ती प्रभु महान, फाल्गुन एकादशी कृष्ण जान ॥
जय जिनवर का जन्माभिषेक, शत अष्ट कलश से करें नेक ॥
शुभ नाम मिला श्रेयान्सनाथ, जय सत्यपरायण सद्यजात ॥
निश्रेयस मार्ग के दर्शायक, जन्मे मति- श्रुत- अवधि धारक ॥
आयु चौरासी लक्ष प्रमाण, तनतुंग धनुष अस्सी मंहान ॥
प्रभु वर्ण सुवर्ण समान पीत, गए पूरब इवकीस लक्ष बीत ॥
हुआ ब्याह महा मंगलकारी, सब सुख भोगों आनन्दकारी ॥
जब हुआ ऋतु का परिवर्तन, वैराग्य हुआ प्रभु को उत्पन्न ॥
दिया राजपाट सुत 'श्रेयस्कर', सब तजा मोह त्रिभुवन भास्कर ॥
सुर लाए "विमलप्रभा' शिविका, उद्यान 'मनोहर' नगरी का ॥
वहाँ जा कर केश लौंच कीने, परिग्रह बाह्यान्तर तज दीने ॥

गए शुद्ध शिला तल पर विराज, ऊपर रहा ‘‘तुम्बुर वृक्ष’ साज ॥
किया ध्यान वहाँ स्थिर होकर, हुआ जान मन:पर्यय सत्वर ॥
हुए धन्य सिद्धार्थ नगर भूप, दिया पात्रदान जिनने अनूपा ॥
महिमा अचिन्त्य है पात्र दान, सुर करते पंच अचरज महान ॥
वन को तत्काल ही लोट गए, पूरे दो साल वे मौन रहे ॥
आई जब अमावस माघ मास, हुआ केवलज्ञान का सुप्रकाश ॥
रचना शुभ समवशरण सुजान, करते धनदेव-तुरन्त आन ॥
प्रभु दिव्यध्वनि होती विकीर्ण, होता कर्मों का बन्ध क्षीण ॥
‘‘उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी विशाल, ऐसे दो भेद बताये काल ॥
एकसौ अड़तालिस बीत जायें, तब हुण्डा- अवसर्पिणी कहाय ॥
सुरवमा- सुरवमा है प्रथम काल, जिसमें सब जीव रहें खुशहाल ॥
दूजा दिखलाते ‘सुखमा’ काल, तीजा ‘‘सुखमा दुरवमा’ सुकाल ॥
चौथा ‘दुखमा-सुखमा’ सुजान, ‘दूखमा’ है पंचमकाल मान ॥
‘दुखमा- दुखमा’ छट्टम महान, छट्टम-छट्टा एक ही समान ॥
यह काल परिणति ऐसी ही, होती भरत- ऐरावत में ही ॥
रहे क्षेत्र विदेह में विद्यमान, बस काल चतुर्थ ही वर्तमान ॥
सुन काल स्वरुप को जान लिया, भवि जीवों का कल्याण हुआ ॥
हुआ दूर- दूर प्रभु का विहार, वहाँ दूर हुआ सब शिथिलाचार ॥
फिर गए प्रभु गिरिवर सम्मेद, धारें सुयोग विभु बिना खेद ॥
हुई पूर्णमासी श्रावण शुक्ला, प्रभु को शाश्वत निजरूप मिला ॥
पूजें सुर ‘‘संकुल कूट’ आन, निर्वाणोत्सव करते महान ॥
प्रभुवर के चरणों का शरणा, जो भविजन लेते सुखदाय ॥
उन पर होती प्रभु की करुणा, ‘अरुणा’ मनवाछिंत फल पाय ॥
जाप: – ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयान्सनाथाय नभः

श्री वासुपूज्य भगवानजी

श्री वासुपूज्य चालीसा

बासु पूज्य महाराज का चालीसा सुखकार।
विनय प्रेम से बॉचिये करके ध्यान विचार।

जय श्री वासु पूज्य सुखकारी, दीन दयाल बाल ब्रह्मचारी।
अदभुत चम्पापुर राजधानी, धर्मी न्यायी ज्ञानी दानी।
वसू पूज्य यहाँ के राजा, करते राज काज निष्काजा।
आपस में सब प्रेम बढाने, बारह शुद्ध भावना भाते।
गऊ शेर आपस ने मिलते, तीनों मौसम सुख में कटते।
सब्जी फल घी दूध हों घर घर, आते जाते मुनी निरन्तर।
वस्तु समय पर होती सारी, जहाँ न हों चोरी बीमारी।
जिन मन्दिर पर ध्वजा फहरायें, घन्टे घरनावल झन्नायें।
शोभित अतिशय मई प्रतिमाये, मन वैराग्य देरव छा जायें।
पूजन, दर्शन नव्हन कराये, करें आरती दीप जलायें।
राग रागनी गायन गायें, तरह तरह के साज बजायें।
कोई अलौकिक नृत्य दिखाये, श्रावक भक्ति में भर जायें।
होती निशदिन शास्त्र सभायें, पद्मासन करते स्वाध्यायें।
विषय कषायें पाप नसायें, संयम नियम विवेक सुहाये।
रागद्वेष अभिमान नशाते, गृहस्थी त्यागी धर्म निभाते।

मिटें परिग्रह सब तृष्णये, अनेकान्त दश धर्म रमायें।
छठ अषाढ़ बदी उर -आये, विजया रानी भाग्य जगाये।
सुन रानी से सोलह सुपने, राजा मन में लगे हरषने।
तीर्थंकर लें जन्म तुम्हारे, होंगे अब उद्धार हमारे।
तीनो बक्त नित रत्न बरसते, विजया मॉ के आँगन भरते।
साढे दस करोड़ थी गिनती, परजा अपनी झोली भरती।
फागुन चौदस बदि जन्माये, सुरपति अदभुत जिन गुण गाये।
मति श्रुत अवधि ज्ञान भंडारी, चालिस गुण सब अतिशय धारी।
नाटक ताण्डव नृत्य दिखाये, नव भव प्रभुजी के दरशाये।
पाण्डु शिला पर नव्हन करायें, वन्त्रभूषन वदन सजाये।
सब जग उत्सव हर्ष मनायें, नारी नर सुर झूला झुलायेँ।
बीते सुख में दिन बचपन के, हुए अठारह लारव वर्ष के।
आप बारहवें हो तीर्थकर, भैसा चिंह आपका जिनवर।
धनुष पचास बदन केशरिया, निस्पृह पर उपकार करइया।
दर्शन पूजा जप तप करते, आत्म चिन्तवन में नित रमते।
गुर- मुनियों का आदर कते, पाप विषय भोगों से बचते।
शादी अपनी नहीं कराई, हारे नान मात समझाई।
मात पिता राज तज दीने, दीक्षा ले दुद्धर तप कीने।
माघ सुदी दोयज दिन आया, कैवलज्ञान आपने पाया।
समोशरण सुर रचे जहाँ पर, छासठ उसमें रहते गणधर।
वासु पूज्य की खिरती वाणी, जिसको गणघरवों ने जानी।
मुख से उनके वो निकली थी, सब जीवों ने वह समझी थी।
आपा आप आप प्रगटाया, निज गुण ज्ञान भान चमकाया।
सब भूलों को राह दिखाई, रत्नत्रय की जोत जलाई।
आत्म गुण अनुभव करवाया, 'सुमत' जैनमत जग फैलाया।
सुदी भादवा चौदस आई, चम्पा नगरी मुक्ती पाई।
आयु बहत्तर लारव वर्ष की, बीती सारी हर्ष धर्म की।
और चोरानवें थे श्री मुनिवर, पहुँच गये वो भी सब शिवपुर।
तभी वहाँ इन्दर सुर आये, उत्सव मिल निर्वाण मनाये।

देह उडी कर्पुर समाना, मधुर सुगन्धी फैला नाना।
फैलाई रत्नों को माला, चारों दिशा चमके उजियाला।
कहै 'सुमत' क्या गुण जिन राई, तुम पर्वत हो मैं हूँ राई।
जब ही भक्ती भाव हुआ है, चम्पापुर का ध्यान किया हैं।
लगी आश मै भी कभी जाऊँ, वासु पूज्य के दर्शन पाऊँ।

सोरठा

खेये धूप सुगन्ध, वासु पूज्य प्रभु ध्यान के।
कर्म भार सब तार, रूप स्वरूप निहार के।
मति जो मन में होय, रहें वैसी हो गति आय के।
करो सुमत रसपान, सरल निज्जात्तम पाय के।

श्री विमलनाथ भगवानजी

श्री विमलनाथ चालीसा

सिद्ध अनन्तानन्त नमन कर, सरस्वती को मन में ध्याय ॥
विमलप्रभु क्री विमल भक्ति कर, चरण कमल में शीश नवाय ॥
जय श्री विमलनाथ विमलेश, आठों कर्म किए नि:शेष ॥
कृतवर्मा के राजदुलारे, रानी जयश्यामा के प्यारे ॥
मंगलीक शुभ सपने सारे, जगजननी ने देखे न्यारे ॥
शुक्ल चतुर्थी माघ मास की, जन्म जयन्ती विमलनाथ की ॥
जन्योत्सव देवों ने मनाया, विमलप्रभु शुभ नाम धराया ॥
मेरु पर अभिषेक कराया, गन्धोंदक श्रद्धा से लगाया ॥
वस्त्राभूषण दिव्य पहनाकर, मात-पिता को सौंपा आकर ॥
साठ लाख वर्षायु प्रभु की, अवगाहना थी साठ धनुष की ॥
कंचन जैसी छवि प्रभु- तन की, महिमा कैसे गाऊँ मैं उनकी ॥
बचपन बीता, यौवन आया, पिता ने राजतिलक करवाया ॥
चयन किया सुन्दर वधुओं का, आयोजन किया शुभ विवाह का ॥
एक दिन देखी ओस घास पर, हिमकण देखें नयन प्रीतिभर ॥
हुआ संसर्ग सूर्य रश्मि से, लुप्त हुए सब मोती जैसे ॥
हो विश्वास प्रभु को कैसे, खड़े रहे वे चित्रलिखित से ॥
"क्षणभंगुर है ये संसार, एक धर्म ही है बस सार ॥

वैराग्य हृदय में समाया, छोडे क्रोध -मान और माया ॥
घर पहुँचे अनमने से होकर, राजपाट निज सुत को देकर ॥
देवीमई शिविका पर चढ़कर, गए सहेतुक वन में जिनवर ॥
माघ मास-चतुर्थी कारी, ‘‘नम: सिद्ध’’ कह दीक्षाधारी ॥
रचना समोशरण हितकार, दिव्य देशना हुई सुरवकार ॥
उपशम करके मिथ्यात्व का, अनुभव करलो निज आत्म का ॥
मिथ्यात्व का होय निवारण, मिटे संसार भ्रमण का कारणा ॥
बिन सम्यक्तव के जप-तप-पूजन, विष्फल हैं सारे व्रत- अर्चन ॥
विषफल हैं ये विषयभोग सब, इनको त्यागो हेय जान अब ॥
द्रव्य- भाव्-नो कमोदि से, भिन्न हैं आत्म देव सभी से ॥
निश्चय करके हे निज आतम का, ध्यान करो तुम परमात्म का ॥
ऐसी प्यारी हित की वाणी, सुनकर सुखी हुए सब प्राणी ॥
दूर-दूर तक हुआ विहार, किया सभी ने आत्मोद्धारा ॥
‘मन्दर’ आदि पचपन गणधर, अड़सठ सहस दिगम्बर मुनिवर ॥
उम्र रही जब तीस दिनों क, जा पहुँचे सम्मेद शिखर जी ॥
हुआ बाह्य वैभव परिहार, शेष कर्म बन्धन निरवार ॥
आवागमन का कर संहार, प्रभु ने पाया मोक्षागारा ॥
षष्ठी कृष्णा मास आसाढ़, देव करें जिनभवित प्रगाढ़ ॥
सुबीर कूट पूजें मन लाय, निर्वाणोत्सव को’ हर्षाय ॥
जो भवि विमलप्रभु को ध्यावें। वे सब मन वांछित फल पावें ॥
‘अरुणा’ करती विमल-स्तवन, ढीले हो जावें भव-बन्धन ॥
जाप: – ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलप्रभु नमः

श्री अनन्तनाथ भगवान जी

श्री अनन्तनाथ चलीसा

अनन्त चतुष्टय धारी 'अनन्त, अनन्त गुणों की खान ''अनन्त' ।
सर्वशुध्द ज्ञायक हैं अनन्त, हरण करें मम दोष अनन्त ।
नगर अयोध्या महा सुखकार, राज्य करें सिहंसेन अपार ।
सर्वयशा महादेवी उनकी, जननी कहलाई जिनवर की ।
द्वादशी ज्येष्ठ कृष्ण सुखकारी, जन्मे तीर्थंकर हितकारी ।
इन्द्र प्रभु को गोद में लेकर, न्हवन करें मेरु पर जाकर ।
नाम ''अनन्तनाथ' शुभ बीना, उत्सव करते नित्य नवीना ।
सार्थक हुआ नाम प्रभुवर का, पार नहीं गुण के सागर का ।
वर्ण सुवर्ण समान प्रभु का, जान धरें मति- श्रुत- अवधि का ।
आयु तीस लख वर्ष उपाई, धनुष अर्घशन तन ऊंचाई ।
बचपन गया जवानी आई, राज्य मिला उनको सुखदाई ।
हुआ विवाह उनका मंगलमय, जीवन था जिनवर का सुखमय ।
पन्द्रह लाख बरस बीते जब, उल्कापात से हुए विरत तब ।
जग में सुख पाया किसने-कब, मन से त्याग राग भाव सब ।
बारह भावना मन में भाये, ब्रह्मर्षि वैराग्य बढाये ।

“अनन्तविजय” सुत तिलक-कराकर, देवोमई शिविका पधरा कर।
गए सहेतुक वन जिनराज, दीक्षित हुए सहस नृप साथ।
द्वादशी कृष्ण ज्येष्ठ शुभ मासा, तीन दिन का धारा उपवास।
गए अयोध्या प्रथम योग कर, धन्य ‘विशाख’ आहार करा कर।
मौन सहित रहते थे वन में, एक दिन तिष्ठे पीपल- तल में।
अटल रहे निज योग ध्यान मेँ, झलके लोकालोक ज्ञान मेँ।
कृष्ण अमावस चैत्र मास की, रचना हुई शुभ समवशरण की।
जिनवर की वाणी जब खिरती, अमृत सम कानों को लगती।
चतुर्गति दुख चित्रण करते, भविजन सुन पापों से डरते।
जो चाहो तुम मुयित्त पाना, निज आतम की शरण में जाना।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित हैँ, कहे व्यवहार मेँ रतनत्रय हैं।
निश्चय से शुद्धातम ध्याकर, शिवपट मिलना सुख रत्नाकर।
श्रद्धा करके भव्य जनों ने, यथाशक्ति व्रत धारे सबने।
हुआ विहार देश और प्रान्त, सत्पथ दर्शाये जिननाथ।
अन्त समय गए सम्मेदाचल, एक मास तक रहे सुनिश्चल।
कृष्ण चैत्र अमावस पावन, भोक्षमहल पहुंचे मनभावन।
उत्सव करते सुरगण आकर, कूट स्वयंप्रभ मन में ध्याकर।
शुभ लक्षण प्रभुवर का ‘सेही’, शोभित होता प्रभु- पद में ही।
हम सब अरज करे बस ये ही, पार करो भवसागर से ही।
है प्रभु लोकालोक अनन्त, झलकें सब तुम ज्ञान अनन्त।
हुआ अनन्त भवों का अन्त, अद्भुत तुम महिमां है “अनन्त’।
जाप: – ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनन्तनाथाय नम:

श्री शान्तिनाथ भगवान जी

श्री शान्तिनाथ चालीसा

शान्तिनाथ भगवान का, चालीसा सुखकार ॥
मोक्ष प्राप्ति के लिय, कहूँ सुनो चितधार ॥
चालीसा चालीस दिन तक, कह चालीस बार ॥
बढ़े जगत सम्पन, सुमत अनुपम शुद्ध विचार ॥
शान्तिनाथ तुम शान्तिनायक, पण्चम चक्री जग सुखदायक ॥
तुम ही सोलहवे हो तीर्थंकर, पूजें देव भूप सुर गणधर ॥
पञ्चाचार गुणोके धारी, कर्म रहित आठों गुणकारी ॥
तुमने मोक्ष मार्ग दर्शाया, निज गुण ज्ञान भानु प्रकटाया ॥
स्याद्वाद विज्ञान उचारा, आप तिरे औरन को तारा ॥
ऎसे जिन को नमस्कार कर, चढूँ सुमत शान्ति नौका पर ॥
सूक्ष्म सी कुछ गाथा गाता, हस्तिनापुर जग विख्याता ॥
विश्व सेन पितु, ऐरा माता, सुर तिहुं काल रत्न वर्षाता ॥
साढे दस करोड़ नित गिरते, ऐरा माँ के आंगन भरते ॥
पन्द्रह माह तक हुई लुटाई, ले जा भर भर लोग लुगाई ॥

भादों बदी सप्तमी गर्भाते, उतम सोलह स्वप्न आते ॥
सुर चारों कायों के आये, नाटक गायन नृत्य दिखाये ॥
सेवा में जो रही देवियाँ, रखती खुश माँ को दिन रतियां ॥
जन्म सेठ बदी चौदश के दिन, घन्टे अनहद बजे गगन घन ॥
तीनों ज्ञान लोक सुखदाता, मंगल सकल हर्ष गुण लाता ॥
इन्द्र देव सुर सेवा करते, विद्या कला ज्ञान गुण बढ़ते ॥
अंग-अंग सुन्दर मनमोहन, रत्न जड़ित तन वस्त्राभूषण ॥
बल विक्रम यश वैभव काजा, जीते छहों खण्ड के राजा ॥
न्यायवान दानी उपचारी, प्रजा हर्षित निर्भय सारी ॥
दीन अनाथ दुखी नही कोई, होती उत्तम वस्तु वोई ॥
ऊँचे आप आठ सौ गज थे, वदन स्वर्ण अरू चिन्ह हिरण थे ॥
शक्ति ऐसी थी जिस्मानी, वरी हजार छानवें रानी ॥
लख चौरासी हाथी रथ थे, घोड़े करोड़ अठारह शुभ थे ॥
सहस पचास भूप के राजन, अरबो सेवा में सेवक जन ॥
तीन करोड़ थी सुंदर गईयां, इच्छा पूर्ण करें नौ निधियां ॥
चौदह रतन व चक्र सुदर्शन, उतम भोग वस्तुएं अनगिन ॥
थी अड़तालीस कोड़ ध्वजायें, कुंडल चंद्र सूर्य सम छाये ॥
अमृत गर्भ नाम का भोजन, लाजवाब ऊंचा सिंहासन ॥
लाखो मंदिर भवन सुसज्जित, नार सहित तुम जिसमें शोभित ॥
जितना सुख था शांतिनाथ को, अनुभव होता ज्ञानवान को ॥
चलें जिव जो त्याग धर्म पर, मिले ठाठ उनको ये सुखकर ॥
पचीस सहस्त्रवर्ष सुख पाकर, उमङा त्याग हितंकर तुमपर ॥
वैभव सब सपने सम माना, जग तुमने क्षणभंगुर जाना ॥
ज्ञानोदय जो हुआ तुम्हारा, पाये शिवपुर भी संसारा ॥
कामी मनुज काम को त्यागें, पापी पाप कर्म से भागे ॥
सुत नारायण तख्त बिठाया, तिलक चढ़ा अभिषेक कराया ॥
नाथ आपको बिठा पालकी, देव चले ले राह गगन की ॥
इत उत इन्दर चँवर ढुरवें, मंगल गाते वन पहुँचावें ॥

भेष दिगम्बर अपना कीना, केश लोच पन मुष्ठी कीना ॥
पूर्ण हुआ उपवास छटा जब, शुद्धाहार चले लेने तब ॥
कर तीनों वैराग चिन्तवन, चारों ज्ञान किये सम्पादन ॥
चार हाथ मग चलतें चलते, षट् कायिक की रक्षा करते ॥
मनहर मीठे वचन उचरते, प्राणिमात्र का दुखड़ा हरते ॥
नाशवान काया यह प्यारी, इससे ही यह रिश्तेदारी ॥
इससे मात पिता सुत नारी, इसके कारण फिरो दुखारी ॥
गर यह तन प्यारा सगता, तरह तरह का रहेगा मिलता ॥
तज नेहा काया माया का , हो भरतार मोक्ष दारा का ॥
विषय भोग सब दुख का कारण, त्याग धर्म ही शिव के साधन ॥
निधि लक्ष्मी जो कोई त्यागे, उसके पीछे पीछे भागे ॥
प्रेम रूप जो इसे बुलावे, उसके पास कभी नही आवे ॥
करने को जग का निस्तारा, छहों खण्ड का राज विसारा ॥
देवी देव सुरा सर आये, उत्तम तप कल्याण मनाये ॥
पूजन नृत्य करें नत मस्तक, गाई महिमा प्रेम पूर्वक ॥
करते तुम आहार जहाँ पर, देव रतन वर्षाते उस घर ॥
जिस घर दान पात्र को मिलता, घर वह नित्य फूलता-फलता ॥
आठों गुण सिद्धों के ध्याकर, दशों धर्म चित काय तपाकर ॥
केवल ज्ञान आपने पाया, लाखों प्राणी पार लगाया ॥
समवशरण में धंवनि खिराई, प्राणी मात्र समझ में आई ॥
समवशरण प्रभु का जहाँ जाता, कोस चार सौ तक सुख पाता ॥
फूल फलादिक मेवा आती, हरी भरी खेती लहराती ॥
सेवा में छत्तिस थे गणधार, महिमा मुझसे क्या हो वर्णन ॥
नकुल सर्प मृग हरी से प्राणी, प्रेम सहित मिल पीते पानी ॥॥
आप चतुर्मुख विराजमान थे, मोक्ष मार्ग को दिव्यवान थे ॥
करते आप विहार गगन में अन्तरिक्ष थे समवशरण में ॥
तीनो जगत आनन्दित किने, हित उपदेश हजारो दीने ॥
पौने लाख वर्ष हित कीना, उम्र रही जब एक महीना ॥

श्री सम्मेद शिखर पर आये, अजर अमर पद तुमने◌े पाये ॥

निष्पृह कर उद्धार जगत के, गये मोक्ष तुम लाख वर्ष के ॥

आंक सकें क्या छवी ज्ञान की, जोत सुर्य सम अटल आपकी ॥

बहे सिन्धु सम गुण की धारा, रहे सुमत चित नाम तुम्हारा ॥

नित चालीस ही बार पाठ करें चालीस दिन ।

खेये सुगन्ध अपार, शांतिनाथ के सामने ॥

होवे चित प्रसन्न, भय चिंता शंका मिटे ।

पाप होय सब हन्न, बल विद्या वैभव बढ़े ॥

श्री कुन्थनाथ भगवान जी

श्री कुन्थनाथ चालीसा

दयासिन्धु कुन्थु जिनराज, भवसिन्धु तिरने को जहाज।
कामदेव... चक्री महाराज, दया करो हम पर भी आज।
जय श्री कुन्युनाथ गुणखान, परम यशस्वी महिमावान।
हस्तिनापुर नगरी के भूपति, शूरसेन कुरुवंशी अधिपति।
महारानी थी श्रीमति उनकी, वर्षा होती थी रतनन की।
प्रतिपदा बैसाख उजियारी, जन्मे तीर्थंकर बलधारी।
गहन भक्ति अपने उर धारे, हस्तिनापुर आए सुर सारे।
इन्द्र प्रभु को गोद में लेकर, गए सुमेरु हर्षित होकर।
न्हवन करें निर्मल जल लेकर, ताण्डव नृत्य करे भक्वि- भर 1
कुन्थुनाथ नाम शुभ देकर, इन्द्र करें स्तवन मनोहर।
दिव्य-वस्त्र- भूषण पहनाए, वापिस हस्तिनापुर को आए।
कम-क्रम से बढे बालेन्दु सम, यौवन शोभा धारे हितकार।
धनु पैंतालीस उन्नत प्रभु- तन, उत्तम शोभा धारें अनुपम।
आयु पिंचानवे वर्ष हजार, लक्षण 'अज' धारे हितकार।
राज्याभिषेक हुआ विधिपूर्वक, शासन करें सुनीति पूर्वक।

चक्ररत्तन शुभ प्राप्त हुआ जब, चक्रवर्ती कहलाए प्रभु तब।
एक दिन गए प्रभु उपवन मेँ, शान्त मुनि इक देखे मग में।
इंगिन किया तभी अंगुलिसे, "देखो मुनिको' -कहा मंत्री से।
मंत्री ने पूछा जब कारण, "किया मोक्षहित मुनिपद धारण'।
कारण करें और स्पष्ट, "मुनिपद से ही कर्म हों नष्ट'।
मंत्रो का तो हुआ बहाना, किया वस्तुतः निज कल्याणा।
चिन विरक्त हुआ विषयों से, तत्व चिन्तन करते भावों से।
निज सुत को सौंपा सब राज, गए सहेतुक वन जिनराज।
पंचमुष्टि से कैशलौंचकर, धार लिया पद नगन दिगम्बर।
तीन दिन बाद गए गजपुर को, धर्ममित्र पड़गाहें प्रभु को।
मौन रहे सोलह वर्षों तक, सहे शीत-वर्षा और आतप।
स्थिर हुए तिलक तरु- जल में, मगन हुए निज ध्यान अटल में।
आतम ने बढ़ गई विशुद्धि, कैवलज्ञान की हो गई सिद्धि।
सूर्यप्रभा सम सोहें आप्त, दिग्मण्डल शोभा हुई व्याप्त।
समोशरण रचना सुखकार, ज्ञाननृपित बैठे नर- नार।
विषय-भोग महा विषमय है, मन को कर देते तन्मय हैं।
विष से मरते एक जनम में, भोग विषाक्त मरें भव- भव में।
क्षण भंगुर मानब का जीवन, विद्युतवन विनसे अगले क्षण।
सान्ध्य ललिमा के सदृश्य ही, यौवन हो जाता अदृश्य ही।
जब तक आतम बुद्धि नही हो, तब तक दरश विशुद्धि नहीं हौं।
पहले विजित करो पंचेन्द्रिय, आत्तमबल से बनो जितेन्द्रिय।
भव्य भारती प्रभु की सुनकर, श्रावकजन आनन्दित को कर।
श्रद्धा से व्रत धारण करते, शुभ भावों का अर्जन करते।
शुभायु एक मास रही जब, शैल सम्मेद पे वास किया तब।
धारा प्रतिमा रोग वहॉ पर, काटा क्रर्मबन्ध्र सब प्रभुवर।
मोक्षकल्याणक करते सुरगण, कूट ज्ञानधर करते पूजन।
चक्री... कामदेव... तीर्थंकर, कुंन्धुनाथ थे परम हितंकर।
चालीसा जो पढे भाव से, स्वयंसिद्ध हों निज स्वभाव से।
धर्म चक्र के लिए प्रभु ने, चक्र सुदर्शन तज डाला।

इसी भावना ने अरुणा को, किया ज्ञान में मतवाला।

जापः — ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुन्थनाथाय नमः

श्री अरहनाथ भगवान जी

श्री अरहनाथ चालीसा

श्री अरहनाथ जिनेन्द्र गुणाकर, ज्ञान-दरस-सुरव-बल रत्नाकर।
कल्पवृक्ष सम सुख के सागर, पार हुए निज आत्म ध्याकर।
अरहनाथ नाथ वसु अरि के नाशक, हुए हस्तिनापुर के शासक।
माँ मित्रसेना पिता सुर्दशन, चक्रवर्ती बन किया दिग्दर्शन।
सहस चौरासी आयु प्रभु की, अवगाहना थी तीस धनुष की।
वर्ण सुवर्ण समान था पीत, रोग शोक थे तुमसे भीत।
ब्याह हुआ जब प्रिय कुमार का, स्वप्न हुआ साकार पिता का।
राज्याभिषेक हुआ अरहजिन का, हुआ अभ्युदय चक्र रत्न का।।
एक दिन देखा शरद ऋतु में, मेघ विलीन हुए क्षण भर मेँ।
उदित हुआ वैराग्य ह्रदय में, तौकान्तिक सुर आए पल में।
'अरविन्द' पुत्र को देकर राज, गए सहेतुक वन जिनराज।
मंगसिर की दशमी उजियारी, परम दिगम्बर टीक्षाधारी।
पंचमुष्टि उखाड़े केश, तन से ममन्व रहा नहीं दलेश।
नगर चक्रपुर गए पारण हित, पढ़गाहें भूपति अपराजित।

प्रासुक शुद्धाहार कराये, पंचाश्चर्य देव कराये।
कठिन तपस्या करते वन में, लीन रहें आत्म चिन्तन में।
कार्तिक मास द्वादशी उज्जवल, प्रभु विराझे आम्र वृक्ष- तल।
अन्तर ज्ञान ज्योति प्रगटाई, हुए केवली श्री जिनराई।
देव करें उत्सव अति भव्य, समोशरण को रचना दिव्य।
सोलह वर्ष का मौनभंग कर, सप्तभंग जिनवाणी सुखकर।
चौदह गुणस्थान बताये, मोह – काय-योग दर्शाये।
सत्तावन आश्रव बतलाये, इतने ही संवर गिनवाये।
संवर हेतु समता लाओ, अनुप्रेक्षा द्वादश मन भाओ।
हुए प्रबुद्ध सभी नर- नारी, दीक्षा व्रत धरि बहु भारी।
कुम्भार्प आदि गणधर तीस, अर्द्ध लक्ष थे सकल मुनीश।
सत्यधर्म का हुआ प्रचार, दूर-दूर तक हुआ विहार।
एक माह पहले निर्वेद, सहस मुनिसंग गए सम्मेद।
चैत्र कृष्ण एकादशी के दिन, मोक्ष गए श्री अरहनाथ जिन।
नाटक कूट को पूजे देव, कामदेव-चक्री...जिनदेव।
जिनवर का लक्षण था मीन, धारो जैन धर्म समीचीन।
प्राणी मात्र का जैन धर्मं है, जैन धर्म ही परम धर्मं हैं।
पंचेन्द्रियों को जीतें जो नर, जिनेन्द्रिय वे वनते जिनवर।
त्याग धर्म की महिमा गाई, त्याग में ही सब सुख हों भाई।
त्याग कर सकें केवल मानव, हैं सक्षम सब देव और मानव।
हो स्वाधीन तजो तुम भाई, बन्धन में पीडा मन लाई।
हस्तिनापुर में दूसरी नशिया, कर्म जहाँ पर नसे घातिया।
जिनके चररणों में धरें, शीश सभी नरनाथ।
हम सब पूजे उन्हें, कृपा करें अरहनाथ।
जाप: – ॐ ह्रीं अर्हं श्री अरहनाथाय नमः

श्री मल्लिनाथ भगवान जी

श्री मल्लिनाथ चालीसा

मोहमल्ल मद-मर्दन करते, मन्मथ दुर्द्धर का मद हरते ॥
धैर्य खड्ग से कर्म निवारे, बालयति को नमन हमारे ॥
बिहार प्रान्त ने मिथिला नगरी, राज्य करें कुम्भ काश्यप गोत्री ॥
प्रभावती महारानी उनकी, वर्षा होती थी रत्नों की ॥
अपराजित विमान को तजकर, जननी उदर वसे प्रभु आकर ॥
मंगसिर शुक्ल एकादशी शुभ दिन, जन्मे तीन ज्ञान युन श्री जिन ॥
पूनम चन्द्र समान हों शोभित, इन्द्र न्हवन करते हो मोहित ॥
ताण्डव नृत्य करें खुश होकर, निरखें प्रभुकौ विस्मित होकर ॥
बढे प्यार से मल्लि कुमार, तन की शोभा हुई अपार ॥
पचपन सहस आयु प्रभुवर की, पच्चीस धनु अवगाहन वपु की ॥
देख पुत्र की योग्य अवस्था, पिता व्याह को को व्यवस्था ॥
मिथिलापुरी को खूब सजाया, कन्या पक्ष सुन कर हर्षाया ॥
निज मन में करते प्रभु मन्थन, है विवाह एक मीठा बन्धन ॥
विषय भोग रुपी ये कर्दम, आत्मज्ञान को करदे दुर्गम ॥
नही आसक्त हुए विषयन में, हुए विरक्त गए प्रभु वन में ॥

मंगसिर शुक्ल एकादशी पावन, स्वामी दीक्षा करते धारण ॥
दो दिन का धरा उपवास, वन में ही फिर किया निवास ॥
तीसरे दिन प्रभु करे विहार, नन्दिषेण नृप वे आहार ॥
पात्रदान से हर्षित होकर, अचरज पाँच करें सुर आकर ॥
मल्लिनाथ जी लौटे वन ने, लीन हुए आतम चिन्तन में ॥
आत्मशुद्धि का प्रबल प्रमाण, अल्प समय में उपजा ज्ञान ॥
केवलज्ञानी हुए छः दिन में, घण्टे बजने लगे स्वर्ग में ॥
समोशरण की रचना साजे, अन्तरिक्ष में प्रभु बिराजे ॥
विशाक्ष आदि अट्ठाइस गणधर, चालीस सहस थे ज्ञानी मुनिवर ॥
पथिकों को सत्पथ दिखलाया, शिवपुर का सन्मार्ग बताया ॥
औषधि-शास्त्र- अभय- आहार, दान बताए चार प्रकार ॥
पंच समिति और लब्धि पाँच, पाँचों पैताले हैं साँच ॥
षट् लेश्या जीव षट्काय, षट् द्रव्य कहते समझाय ॥
सात त्त्व का वर्णन करते, सात नरक सुन भविमन डरते ॥
सातों नय को मन में धारें, उत्तम जन सन्देह निवारें ॥
दीर्घ काल तक दिए उपदेश, वाणी में कटुता नहीं लेश ॥
आयु रहने पर एक मान, शिखर सम्मेद पे करते वास ॥
योग निरोध का करते पालन, प्रतिमा योग करें प्रभु धारण ॥
कर्म नष्ट कीने जिनराई, तनंक्षण मुक्ति- रमा परणाई ॥
फाल्गुन शुक्ल पंचमी न्यारी, सिद्ध हुए जिनवर अविकारी ॥
मोक्ष कल्याणक सुर- नर करते, संवल कूट की पूजा करते ॥
चिन्ह ‘कलश’ था मल्लिनाथ का, जीन महापावन था उनका ॥
नरपुंगव थे वे जिनश्रेष्ठ, स्त्री कहे जो सत्य न लेश ॥
कोटि उपाय करो तुम सोच, स्वीभव से हो नहीं मोक्ष ॥
महाबली थे वे शुरवीर, आत्म शत्रु जीते धर- धीर ॥
अनुकम्पा से प्रभु मल्लि हैं, अल्पायु हो भव... वल्लि की ॥
अरज यही है बस हम सब की, दृष्टि रहे सब पर करूणा की ॥

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान जी

श्री मुनिसुव्रतनाथ चालीसा

आरिहंत सिद्ध आचार्य को, शत शत करूँ प्रणाम
उपाध्याय सर्वसाधु, करते सब पर कल्याण
जिनधर्म, जिनागम, जिन मंदिर पवित्र धाम
वितराग की प्रतिमा को, कोटी कोटी प्रणाम
जय मुनिसुव्रत दया के सागर, नाम प्रभु का लोक उजागर
सुमित्रा राजा के तुम नन्दा, माँ शामा की आंखों के चन्दा
श्यामवर्ण मुरत प्रभु की प्यारी, गुनगान करे निशदिन नर नारी
मुनिसुव्रत जिन हो अन्तरयामी, श्रद्धा भाव सहित तम्हे प्रणामी
भक्ति आपकी जो निश दिन करता, पाप ताप भय संकट हरता
प्रभु संकट मोचन नाम तुम्हारा, दीन दुखी जिवो का सहारा
कोई दरिद्री या तन का रोगी, प्रभु दर्शन से होते है निरोगी
मिथ्या तिमिर भ्यो अती भारी, भव भव की बाधा हरो हमारी
यह संसार महा दुखदाई, सुख नही यहां दुख की खाई
मोह जाल में फंसा है बंदा, काटो प्रभु भव भव का फंदा

रोग शोक भय व्याधी मिटावो, भव सागर से पार लगाओ
घिरा कर्म से चौरासी भटका, मोह माया बन्धन में अटका
संयोग – वियोग भव भव का नाता, राग द्वेष जग में भटकाता
हित मित प्रिय प्रभु की वानी, सब पर कल्याण करे मुनि धयानी
भव सागर बीच नाव हमारी, प्रभु पार करो यह विरद तिहारी
मन विवेक मेरा जब जागा , प्रभु दर्शन से कर्ममल भागा
नाम आपका जपे जो भाई, लोका लोक सम्पदा पाई
कृपा दृष्टी जब आपकी होवे, धन अरोग्य सुख समृद्धि पावे
प्रभु चरणन में जो जो आवे, श्रद्धा भक्ती फल वांछित पावे
प्रभु आपका चमत्कार है न्यारा, संकट मोचन प्रभु नाम तुम्हारा
सर्वज्ञ अनंत चतुष्टय के धारी, मन वच तन वंदना हमारी
सम्मेद शिखर से मोक्ष सिधारे, उद्धार करो मैं शरण तिहारी ॥
महाराष्ट्र का पैठण तीर्थ, सुप्रसिद्ध यह अतिशय क्षेत्र ।
मनोज्ञ मन्दिर बना है भारी, वीतराग की प्रतिमा सुखकारी ॥
चतुर्थ कालीन मूर्ति है निराली, मुनिसुव्रत प्रभु की छवी है प्यारी ।
मानस्तंभ उतंग की शोभा न्यारी, देखत गलत मान कषाय भारी ॥
मुनिसुव्रत शनिग्रह अधिष्टाता, दुख संकट हरे देवे सुख साता ।
शनि अमावस की महिमा भारी, दुर – दुर से यहा आते नर नारी ॥
सम्यक् श्रद्धा से चालिसा, चालिस दिन पढिये नर-नार ।
मुनि पथ के राही बन, भक्ति से होवे भव पार ॥

श्री नमिनाथ भगवान जी

श्री नमिनाथ चालीसा

सतत पूज्यनीय भगवान, नमिनाथ जिन महिभावान।
भक्त करें जो मन में ध्याय, पा जाते मुक्ति-वरदान।
जय श्री नमिनाथ जिन स्वामी, वसु गुण मण्डित प्रभु प्रणमामि।
मिथिला नगरी प्रान्त बिहार, श्री विजय राज्य करें हितकर।
विप्रा देवी महारानी थीं, रूप गुणों की वे खानि थीं।
कृष्णाश्विन द्वितीया सुखदाता, षोडश स्वप्न देखती माता।
अपराजित विमान को तजकर, जननी उदर वसे प्रभु आकर।
कृष्ण असाढ़- दशमी सुखकार, भूतल पर हुआ प्रभु- अवतार।
आयु सहस दस वर्ष प्रभु की, धनु पन्द्रह अवगाहना उनकी।
तरुण हुए जब राजकुमार, हुआ विवाह तब आनन्दकार।
एक दिन भ्रमण करें उपवन में, वर्षा ऋतु में हर्षित मन में।
नमस्कार करके दो देव, कारण कहने लगे स्वयमेव।
ज्ञात हुआ है क्षेत्र विदेह में, भावी तीर्थंकर तुम जग में।
देवों से सुन कर ये बात, राजमहल लौटे नमिनाथ।
सोच हुआ भव- भव ने भ्रमण का, चिन्तन करते रहे मोचन का।
परम दिगम्बर व्रत करूँ अर्जन, रत्नत्रयधन करूँ उपार्जन।
सुप्रभ सुत को राज सौंपकर, गए चित्रवन ने श्रीजिनवर।

दशमी असाढ़ मास की कारी, सहस नृपति संग दीक्षाधारी।
दो दिन का उपवास धारकर, आतम लीन हुए श्री प्रभुवर।
तीसरे दिन जब किया विहार, भूप वीरपुर दें आहार।
नौ वर्षों तक तप किया वन में, एक दिन मौलि श्री तरु तल में।
अनुभूति हुई दिव्याभास, शुक्ल एकादशी मंगसिर मास।
नमिनाथ हुए ज्ञान के सागर, ज्ञानोत्सव करते सुर आकर।
समोशरण था सभा विभूषित, मानस्तम्भ थे चार सुशोभित।
हुआ मौनभंग दिव्य धवनि से, सब दुख दूर हुए अवनि से।
आत्म पदार्थ से सत्ता सिद्ध, करता तन ने 'अहम्' प्रसिद्ध।
बाह्योन्द्रियों में करण के द्वारा, अनुभव से कर्ता स्वीकारा।
पर...परिणति से ही यह जीव, चतुर्गति में भ्रमे सदीव।
रहे नरक-सागर पर्यन्त, सहे भूख – प्यास तिर्यन्च।
हुआ मनुज तो भी सक्लेश, देवों में भी ईष्या-द्वेष।
नहीं सुखों का कहीं ठिकाना, सच्चा सुख तो मोक्ष में माना।
मोक्ष गति का द्वार है एक, नरभव से ही पाये नेक।
सुन कर मगन हुए सब सुरगण, व्रत धारण करते श्रावक जन।
हुआ विहार जहाँ भी प्रभु का, हुआ वहीं कल्याण सभी का।
करते रहे विहार जिनेश, एक मास रही आयु शेष।
शिखर सम्मेद के ऊपर जाकर, प्रतिमा योग धरा हर्षा कर।
शुक्ल ध्यान की अग्नि प्रजारी, हने अघाति कर्म दुखकारी।
अजर... अमर... शाश्वत पद पाया, सुर- नर सबका मन हर्षाया।
शुभ निर्वाण महोत्सव करते, कूट मित्रधर पूजन करते।
प्रभु हैं नीलकमल से अलंकृत, हम हों उत्तम फ़ल से उपकृत।
नमिनाथ स्वामी जगवन्दन, 'रमेश' करता प्रभु- अभिवन्दन।
जाप: ... ॐ ह्रीं अर्ह श्री नमिनाथाय नम:

श्री नेमिनाथ भगवान जी

श्री नेमिनाथ- चालीसा

श्री जिनवाणी शीश धार कर, सिध्द प्रभु का करके ध्यान।
लिखू नेमि- चालीसा सुखकार, नेमिप्रभु की शरण में आन।
समुद्र विजय यादव कूलराई, शौरीपुर राजधानी कहाई।
शिवादेवी उनकी महारानी , षष्ठी कार्तिक शुक्ल बरवानी।
सुख से शयन करे शय्या पर, सपने देखें सोलह सुन्दर।
तज विमान जयन्त अवतारे, हुए मनोरथ पूरण सारे।
प्रतिदिन महल में रतन बरसते, यदुवंशी निज मन में हरषते।
दिन षष्ठी श्रावण शुक्ला का, हुआ अभ्युदय पुत्र रतन का।
तीन लोक में आनन्द छाया, प्रभु को मेरू पर पधराश।
न्हवन हेतु जल ले क्षीरसागर, मणियो के थे कलश मनोहर।
कर अभिषेक किया परणाम, अरिष्ट नेमि दिया शुभ नाम।
शोभित तुमसे सस्य-मराल, जीता तुमने काल – कराल।
सहस अष्ट लक्षण सुललाम, नीलकमल सम वर्ण अभिराम।
वज्र शरीर दस धनुष उतंग, लज्जित तुम छवि देव अनंग।
घाचा-ताऊ रहते साथ, नेमि-कृष्ण चचेरे भ्रात।

धरा जब यौवन जिनराई, राजुल के संग हुई सगाई।
जूनागड़ को चली बरात, छप्पन कोटि यादव साथ।
सुना वहाँ पशुओं का क्रन्दन, तोडा मोर – मुकुट और कंगन।
बाडा खौल दिया पशुओं का, धारा वेष दिगम्बर मुनि का।
कितना अदभुत संयम मन में, ज्ञानीजन अनुभव को मन में।
नौ-नौ आँसू राजुल रोवे, बारम्बार मूर्छित होवे।
फेंक दिया दुल्हन श्रृंगार, रो...रो कर यों करें पुकार।
नौ भव की तोडी क्यों प्रीत, कैसी है ये धर्म की रीत।
नेमि दें उपदेश त्याग का, उमडा सागर वैराग्य का।
राजुल ने भी ले ली दीक्षा, हुई संयम उतीर्ण परीक्षा॥
दो दिन रहकर के निराहार, तीसरे दिन स्वामी करे विहार।
वरदत महीपति दे आहार, पंचाश्चर्य हुए सुखकार।
रहे मौन से छप्पन दिन तक, तपते रहे कठिनतम तप व्रत।
प्रतिपदा आश्विन उजियारी, हुए केवली प्रभु अविकारी।
समोशरण की रचना करते, सुरगण ज्ञान की पूजा करते।
भवि जीवों के पुण्य प्रभाव से, दिव्य ध्वनि खिरती सद्भाव से।
जो भी होता है अतमज्ञ, वो ही होता है सर्वज्ञ।
ज्ञानी निज आत्म को निहारे, अज्ञानी पर्याय संवारे।
है अदभुत वैरागी दृष्टि, स्वाश्रित हो तजते सब सृष्टि।
जैन धर्म तो धर्म सभी का, है निज़घर्म ये प्राणीमात्र का। 1
जो भी पहचाने जिनदेव, वो ही जाने आत्म देव।
रागादि कै उन्मुलन को, पूजें सब जिनदेवचरण को।
देश विदेश में हुआ विहार, गए अन्त में गढ़ गिरनार।
सब कर्मों का करके नाश, प्रभु ने पाया पद अविनाश।
जो भी प्रभु की शरण ने आते, उनको मन वांछित मिलजाते।
ज्ञानार्जन करके शास्त्रों से, लोकार्पण करती श्रद्धा से।
हम बस ये ही वर चाहे, निज आतम दर्शन हो जाए।

श्री पार्श्वनाथ भगवान जी

श्री पार्श्वनाथ - चालीसा

दोहा

शीश नवा अरिहंत को, सिद्धन करुं प्रणाम |
उपाध्याय आचार्य का ले सुखकारी नाम |
सर्व साधु और सरस्वती, जिन मन्दिर सुखकार |
अहिच्छत्र और पार्श्व को, मन मन्दिर में धार ||

|| चौपाई ||

पार्श्वनाथ जगत हितकारी, हो स्वामी तुम व्रत के धारी |
सुर नर असुर करें तुम सेवा, तुम ही सब देवन के देवा |
तुमसे करम शत्रु भी हारा, तुम कीना जग का निस्तारा |
अश्वसैन के राजदुलारे, वामा की आँखो के तारे |
काशी जी के स्वामी कहाये, सारी परजा मौज उड़ाये |
इक दिन सब मित्रों को लेके, सैर करन को वन में पहुँचे |

हाथी पर कसकर अम्बारी, इक जगंल में गई सवारी |
एक तपस्वी देख वहां पर, उससे बोले वचन सुनाकर |
तपसी! तुम क्यों पाप कमाते, इस लक्कड़ में जीव जलाते |
तपसी तभी कुदाल उठाया, उस लक्कड़ को चीर गिराया |
निकले नाग-नागनी कारे, मरने के थे निकट बिचारे |
रहम प्रभू के दिल में आया, तभी मन्त्र नवकार सुनाया |
भर कर वो पाताल सिधाये, पद्मावति धरणेन्द्र कहाये |
तपसी मर कर देव कहाया, नाम कमठ ग्रन्थों में गाया |
एक समय श्रीपारस स्वामी, राज छोड़ कर वन की ठानी |
तप करते थे ध्यान लगाये, इकदिन कमठ वहां पर आये |
फौरन ; ही प्रभु को पहिचाना, बदला लेना दिल में ठाना |
बहुत अधिक बारिश बरसाई, बादल गरजे बिजली गिराई |
बहुत अधिक पत्थर बरसाये, स्वामी तन को नहीं हिलाये |
पद्मावती धरणेन्द्र भी आए, प्रभु की सेवा मे चित लाए |
धरणेन्द्र ने फन फैलाया, प्रभु के सिर पर छत्र बनाया |
पद्मावति ने फन फैलाया, उस पर स्वामी को बैठाया |
कर्मनाश प्रभु ज्ञान उपाया, समोशरण देवेन्द्र रचाया |
यही जगह अहिच्छत्र कहाये, पात्र केशरी जहां पर आये |
शिष्य पाँच सौ संग विद्वाना, जिनको जाने सकल जहाना |
पार्श्वनाथ का दर्शन पाया सबने जैन धरम अपनाया |
अहिच्छत्र श्री सुन्दर नगरी, जहाँ सुखी थी परजा सगरी |
राजा श्री वसुपाल कहाये, वो इक जिन मन्दिर बनवाये |
प्रतिमा पर पालिश करवाया, फौरन इक मिस्त्री बुलवाया |
वह मिस्तरी मांस था खाता, इससे पालिश था गिर जाता |
मुनि ने उसे उपाय बताया, पारस दर्शन व्रत दिलवाया |
मिस्त्री ने व्रत पालन कीना, फौरन ही रंग चढ़ा नवीना |
गदर सतावन का किस्सा है, इक माली का यों लिक्खा है |
वह माली प्रतिमा को लेकर, झट छुप गया कुए के अन्दर |
उस पानी का अतिशय भारी, दूर होय सारी बीमारी |

जो अहिच्छत्र हृदय से ध्वावे, सो नर उत्तम पदवी वावे |
पुत्र संपदा की बढ़ती हो, पापों की इक दम घटती हो |
है तहसील आंवला भारी, स्टेशन पर मिले सवारी |
रामनगर इक ग्राम बराबर, जिसको जाने सब नारी नर |
चालीसे को 'चन्द्र' बनाये, हाथ जोड़कर शीश नवाये |
सोरठाः- नित चालीसहिं बार, पाठ करे चालीस दिन |
खेय सुगन्ध अपार, अहिच्छत्र में आय के |
होय कुबेर समान, जन्म दरिद्री होय जो |
जिसके नहिं सन्तान, नाम वंश जग में चले ||

बड़ागाँव श्री पार्श्वनाथ भगवान जी

श्री पार्श्वनाथ - चालीसा

(दोहा)

बड़ागाँव अतिशय बड़ा, बनते बिगड़े काज।
तीन लोक तीरथ नमहुँ, पार्श्व प्रभु महाराज ॥१॥

आदि-चन्द्र-विमलेश-नमि, पारस-वीरा ध्याय।
स्याद्वाद जिन-धर्म नमि, सुमति गुरु शिरनाय ॥२॥

(मुक्त छन्द)

भारत वसुधा पर वसु गुण सह, गुणिजन शाश्वत राज रहे।
सबकल्याणक तीर्थ-मूर्ति सह, पंचपरम पद साज रहे ॥१॥

खाण्डव वन की उत्तर भूमी, हस्तिनापुर लग भाती है।
धरा-धन्य रत्नों से भूषित, देहली पास सुहाती है ॥२॥

अर्धचक्रि रावण पंडित ने, आकर ध्यान लगाया था।
अगणित विद्याओं का स्वामी, विद्याधर कहलाया था ॥३॥

आदि तीर्थंकर ऋषभदेव का, समवशरण मन भाया था।
अगणित तीर्थंकर उपदेशी, भव्यों बोध कराया था ॥४॥

चन्द्रप्रभु अरु विमलनाथ का, यश-गौरव भी छाया था।
पारसनाथ वीर प्रभुजी का, समोशरण लहराया था ॥५॥

बड़ागाँव की पावन-भूमी, यह इतिहास पुराना है।
भव्यजनों ने करी साधना, मुक्ती का पैमाना है ॥६॥

काल परिणमन के चक्कर में, परिवर्तन बहुबार हुए।
राजा नेक शूर-कवि-पण्डित, साधक भी क्रम वार हुए ॥७॥

जैन धर्म की ध्वजा धरा पर, आदिकाल से फहरायी।
स्याद्वाद की सप्त-तरंगें, जन-मानस में लहरायी ॥८॥

बड़ागाँव जैनों का गढ़ था, देवों गढ़ा कहाता था।
पाँचों पाण्डव का भी गहरा, इस भूमी से नाता था ॥९॥

पारस-टीला एक यहाँ पर, जन-आदर्श कहाता था।
भक्त मुरादें पूरी होतीं, देवों सम यश पाता था ॥१०॥

टीले की ख्याती वायु सम, दिग्-दिगन्त में लहराई।
अगणित चमत्कार अतिशय-युत, सुरगण ने महिमा गाई ॥११॥

शीशराम की सुन्दर धेनु, नित टीले पर आती थी।
मौका पाकर दूध झराकर, भक्ति-भाव प्रगटाती थी ॥१२॥

ऐलक जी जब लखा नजारा, कैसी अद्भुत माया है।
बिना निकाले दूध झर रहा, क्या देवों की छाया है ॥१३॥

टीले पर जब ध्यान लगाया, देवों ने आ बतलाया।
पारस-प्रभु की अतिशय प्रतिमा, चमत्कार सुर दिखलाया ॥१४॥

भक्तगणों की भीड़ भावना, धैर्य बाँध भी फूट पड़ा।
लगे खोदने टीले को सब, नागों का दल टूट पड़ा ॥१५॥

भयाकुलित लख भक्त-गणों को, नभ से मधुर-ध्वनी आयी।
घबराओ मत पारस प्रतिमा, शनैः शनैः खोदो भाई ॥१६॥

ऐलक जी ने मंत्र शक्ति से, सारे विषधर विदा किये।
णमोकार का जाप करा कर, पार्श्व-प्रभू के दर्श लिये ॥१७॥

अतिशय दिव्य सुशोभित प्रतिमा, लखते खुशियाँ लहराई।
नाच उठे नर-नारि खुशी से, जय-जय ध्वनि भू नभ छाई ॥१८॥

मेला सा लग गया धरा, पारस प्रभु जय-जयकारे।
मानव पशुगण की क्या गणना, भक्ती में सुरपति हारे ॥१९॥

जब-जब संकट में भक्तों ने, पारस प्रभु पुकारे हैं।
जग-जीवन में साथ न कोई, प्रभुवर बने सहारे हैं ॥२०॥

बंजारों के बाजारों में, बड़ेगाँव की कीरत थी।
लक्ष्मण सेठ बड़े व्यापारी, सेठ रत्न की सीरत थी ॥२१॥

अंग्रेजों ने अपराधी कह, झूठा दाग लगाया था।
तोपों से उड़वाने का फिर, निर्दय हुकुम सुनाया था ॥२२॥

दुखी हृदय लक्ष्मण ने आकर, पारस-प्रभु से अर्ज करी।
अगर सत्य हूँ हे निर्णायक, करवा दो प्रभु मुझे बरी ॥२३॥

कैसा अतिशय हुआ वहाँ पर, शीतल हुआ तोप गोला।
गद-गद्-हृदय हुआ भक्तों का, उतर गया मिथ्या-चोला ॥२४॥

भक्त-देव आकर के प्रतिदिन, नूतन नृत्य दिखाते हैं।
आपत्ति लख भक्तगणों पर, उनको धैर्य बंधाते हैं ॥२५॥

भूत-प्रेत जिन्दों की बाधा, जप करते कट जाती है।
कैसी भी हो कठिन समस्या, अर्चे हल हो जाती है ॥२६॥

नेत्रहीन कतिपय भक्तों ने, नेत्र-भक्ति कर पाये हैं।
कुष्ठ-रोग से मुक्त अनेकों, कंचन-काया भाये हैं ॥२७॥

दुख-दारिद्र ध्यान से मिटता, शत्रु मित्र बन जाते हैं।
मिथ्या तिमिर भक्ति दीपक लख, स्वाभाविक छंट जाते हैं ॥२८॥

पारस कुइया का निर्मल जल, मन की तपन मिटाता है।
चर्मरोग की उत्तम औषधि रोगी पी सुख पाता है ॥२९॥

तीन शतक पहले से महिमा, अधुना बनी यथावत् है।
श्रद्धा-भक्ती भक्त शक्ति से, फल नित वरे तथावत् है ॥३०॥

स्वप्न सलोना दे श्रावक को, आदीश्वर प्रतिमा पायी।
वसुधा-गर्भ मिले चन्दाप्रभु, विमल सन्मती गहरायी ॥३१॥

आदिनाथ का सुमिरन करके, आधि-व्याधि मिट जाती है।
चन्दाप्रभु अर्चे छवि निर्मल, चन्दा सम मन भाती है ॥३२॥

विमलनाथ पूजन से विमला, स्वाभाविक मिल जाती है।
पारस प्रभु पारस सम महिमा, वर्द्धमान सुख थाती है ॥३३॥

दिव्य मनोहर उच्च जिनालय समवशरण सह शोभित हैं।
पंच जिनालय परमेश्वर के, भव्यों के मन मोहित हैं ॥३४॥

बनी धर्मशाला अति सुन्दर, मानस्तम्भ सुहाता है।
आश्रम गुरुकुल विद्यालय यश, गौरव क्षेत्र बढ़ाता है ॥३५॥

यह स्याद्वाद का मुख्यालय, यह धर्म-ध्वजा फहराता है।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरण सह, मुक्ती-पथ दरशाता है ॥३६॥

तीन लोक तीरथ की रचना, ज्ञान ध्यान अनुभूति करो।
गुरुकुल साँवलिया बाबाजी, जो माँगो दें अर्ज करो ॥३७॥

अगहन शुक्ला पंचमि गुरुदिन, विद्याभूषण शरण लही।
स्याद्वाद गुरुकुल स्थापन, पच्चीसों चौबीस भई ॥३८॥

शिक्षा मंदिर औषधि शाला, बने साधना केन्द्र यहीं।
दुख दारिद्र मिटे भक्तों का, अनशरणों की शरण सही ॥३९॥

स्वारथ जग नित-प्रति धोखे खा, सन्मति शरणा आये हैं।
चूक माफ मनवांछित फल दो, स्याद्वाद गुण गाये हैं ॥४०॥

(दोहा)

हे पारस जग जीव हों, सुख सम्पति भरपूर।
साम्यभाव 'सन्मति' रहे, भव दुख हो चकचूर ॥

श्री महावीर भगवान जी

श्री महावीर चालीसा

दोहा

सिद्ध समूह नमों सदा, अरु सुमरूं अरहन्त।
निर आकुल निर्वांच्छ हो, गए लोक के अंत ॥
मंगलमय मंगल करन, वर्धमान महावीर।
तुम चिंतत चिंता मिटे, हरो सकल भव पीर ॥

चौपाई

जय महावीर दया के सागर, जय श्री सन्मति ज्ञान उजागर।
शांत छवि मूरत अति प्यारी, वेष दिगम्बर के तुम धारी।
कोटि भानु से अति छबि छाजे, देखत तिमिर पाप सब भाजे।
महाबली अरि कर्म विदारे, जोधा मोह सुभट से मारे।
काम क्रोध तजि छोड़ी माया, क्षण में मान कषाय भगाया।
रागी नहीं नहीं तू द्वेषी, वीतराग तू हित उपदेशी।
प्रभु तुम नाम जगत में साँचा, सुमरत भागत भूत पिशाचा।
राक्षस यक्ष डाकिनी भागे, तुम चिंतत भय कोई न लागे।
महा शूल को जो तन धारे, होवे रोग असाध्य निवारे।

व्याल कराल होय फणधारी, विष को उगल क्रोध कर भारी।
महाकाल सम करै डसन्ता, निर्विष करो आप भगवन्ता।
महामत्त गज मद को झारै, भगै तुरत जब तुझे पुकारै।
फार डाढ़ सिंहादिक आवै, ताको हे प्रभु तुही भगावै।
होकर प्रबल अग्नि जो जारै, तुम प्रताप शीतलता धारै।
शस्त्र धार अरि युद्ध लड़न्ता, तुम प्रसाद हो विजय तुरन्ता।
पवन प्रचण्ड चलै झकझोरा, प्रभु तुम हरौ होय भय चोरा।
झार खण्ड गिरि अटवी मांहीं, तुम बिनशरण तहां कोउ नांहीं।
वज्रपात करि घन गरजावै, मूसलधार होय तड़कावै।
होय अपुत्र दरिद्र संताना, सुमिरत होत कुबेर समाना।
बंदीगृह में बँधी जंजीरा, कठ सुई अनि में सकल शरीरा।
राजदण्ड करि शूल धरावै, ताहि सिंहासन तुही बिठावै।
न्यायाधीश राजदरबारी, विजय करे होय कृपा तुम्हारी।
जहर हलाहल दुष्ट पियन्ता, अमृत सम प्रभु करो तुरन्ता।
चढ़े जहर, जीवादि डसन्ता, निर्विष क्षण में आप करन्ता।
एक सहस वसु तुमरे नामा, जन्म लियो कुण्डलपुर धामा।
सिद्धारथ नृप सुत कहलाए, त्रिशला मात उदर प्रगटाए।
तुम जनमत भयो लोक अशोका, अनहद शब्दभयो तिहुँलोका।
इन्द्र ने नेत्र सहस्र करि देखा, गिरी सुमेर कियो अभिषेखा।
कामादिक तृष्णा संसारी, तज तुम भए बाल ब्रह्मचारी।
अथिर जान जग अनित बिसारी, बालपने प्रभु दीक्षा धारी।
शांत भाव धर कर्म विनाशे, तुरतहि केवल ज्ञान प्रकाशे।
जड़-चेतन त्रय जग के सारे, हस्त रेखवत् सम तू निहारे।
लोक-अलोक द्रव्य षट जाना, द्वादशांग का रहस्य बखाना।
पशु यज्ञों का मिटा कलेशा, दया धर्म देकर उपदेशा।
अनेकांत अपरिग्रह द्वारा, सर्वप्राणि समभाव प्रचारा।
पंचम काल विषै जिनराई, चांदनपुर प्रभुता प्रगटाई।
क्षण में तोपनि बाढि-हटाई, भक्तन के तुम सदा सहाई।
मूरख नर नहिं अक्षर ज्ञाता, सुमरत पंडित होय विख्याता।

सोरठा

करे पाठ चालीस दिन नित चालीसहिं बार।
खेवै धूप सुगन्ध पढ़, श्री महावीर अगार ॥
जनम दरिद्री होय अरु जिसके नहिं सन्तान।
नाम वंश जग में चले होय कुबेर समान ॥